※ टीकाकार के श्री गुरुदेव जी ※

श्री श्री १०८ श्रीसियाशरण जी (श्रीमधुकरजी) महाराज

श्री चारुशीला मन्दिर, श्री चारुशीला बाग

श्री जानकीघाट, श्री अयोध्या जी

श्रीग्रन्थकार जी के आदि गुरुदेव श्रीसीताराम उपासना रसिकाचार्य

श्री श्री १००८ श्री रामचरण दास जी
(श्रीकरुणासिन्धुजी) महाराज

श्रीजानकी घाट-बड़ास्थान, श्री अयोध्या जी

विषय सूची

बरात को रास्ते में गुप्त चरित्र दीख पड़ा पितृलोक का दर्शन। द्विपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४०१॥

रास्ते में बरात के चलने की धूम धाम। चतुष्पञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४०६

श्री देवौज जी का कन्या विवाहार्थ इन्तजाम। पञ्चपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥पृष्ठ ४२६॥

बरात का स्वागत तथा कन्याओं का विवाह। षडपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥पृष्ठ ४५२॥

विवाह के बाद उपकार्य भोजनादि दहेज विधि। सप्तपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४६२॥

श्री अयोध्या में दुलहा दुलहिन सहित बरात का स्वागत। अष्टपञ्चाशत्तम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४६६॥

श्रीचन्द्र कन्याओं द्वारा स्तुति। एकोन षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ४८२॥

कन्या विवाहार्थ बहुत से राजाओं द्वारा भेजे गये दूतों का श्रीअयोध्या दर्शन व प्रार्थना स्वीकृति प्राप्त करना। षष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥पृष्ठ ४६१॥

माणवक नगरीके राजा उद्धविक्रमकी कन्याओं से विवाह। एकषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥पृष्ठ ५०३॥

श्री गोपों के राजा की प्रार्थना द्वारा बहुत सी सखियों सहित गोपराज कन्या का विवाह तथा गन्धर्वराज व नागराज की कन्याओं से विवाह। द्विषष्ठितम स्सर्ग स्समाप्तः॥ पृष्ठ ५१६॥

मालवक देश के राजा श्री चन्द्रमौली जी की कन्याओं से विवाह, तथा आपके मन्त्रि श्रीसुरप्रभ जी की भी प्रार्थना स्वीकार करके कन्याओं को श्रीरामजी स्वीकार किये। फिर पश्चिमदेशीय और भी बहुत से राजाओंकी प्रार्थना भी स्वीकार किये।

॥ इति शुभम्॥

❀ श्री अमर रामायण ❀

(श्रीराम रत्न मञ्जूषा)

❀ बन्दना ❀

जै जै सीताराम जी सबके कारण एक ॥
अद्भुत धाम चरित्र युत निरखत सन्त विवेक ॥१॥
रूप सींव रस सींव दोउ निर्गुण सगुण अपार ॥
रास रंग रस सिन्धु में राम नाम सुख सार ॥२॥
जै मिथिलाधिप नन्दनी जै अवधेश किशोर ॥
जैति चारुशीला अली सकल सखिन शिर मौर ॥३॥
जै जै जै हनुमान श्री श्रीप्रसाद अवतार ॥
चारुशिला सर्वेश्वरी तीन रूप निजधार ॥४॥
जै श्री शुभगा 'भरत' तन सेवा समय सुधार ॥
महाविष्णु अवतार महि 'सनक' 'सुशीला' चार ॥५॥
जै विमला अरु 'लछिमना' लक्ष्मण रूपहु धार ॥
नारायण, पुनि शेष तन सेवा समय विचार ॥६॥
जै हेमा 'श्री' रिपुदमन, तीन रूप सुख सार ॥
दम्पति सेवा सुरुख लखि 'भौमा' सुक मुनि धार ॥७॥
सूर्य अंश सुग्रीव 'शिव' शंकर्षण, अवतार ॥
जय अतिशीला प्यारि प्रिय सु वरारोहा धार ॥८॥
जयति बिभीषण 'भीषणा' विश्व मोहनी शक्ति ॥
पद्म सुगन्धा लाड़िली लाल प्रिया वर भक्ति ॥९॥
भू शक्ती भूधरण की सुलोचना सिय प्यारि ॥
जयति जृम्भणा हरि प्रिया जाम्बवान तनुधारि ॥१०॥
जयति क्षमावति क्षेमदा 'क्षेमा' क्षमावतार ॥
अंगद विद्या वारिधर 'बागीशा' वर चार ॥११॥
पार्षदाष्ट सिय राम के रसिकन हिय सुख सार ॥
वन्दौं सबके पद कमल दिव्य दृष्टि दातार ॥१२॥

—:❀:—

* श्री अमर रामायण टीकाकार व प्रकाशकः *

जानकीशरण मधुकरिया

श्रीचारुशीला मन्दिर, श्रीजानकीघाट

श्री अयोध्या जी

स्फटिकैः सित वर्णाश्च क्वचिच्चामीकराः शुभाः ॥
चित्रवर्णैर्मयूरैस्तु विजिन्मार्तण्डमण्डला ॥१३॥

कहीं २ पर स्फटिक मणि के सफेद वर्ण वाले कहीं स्वर्ण के सुन्दर महल बने हैं जिनमें चित्र रङ्ग के मोरों का नृत्य हो रहा है । इस प्रकार के वे महल अपने प्रकाश से सूर्य मण्डल को जीत रहे हैं ॥१३॥

देव सद्मनानि राजन्ते तत्र तीर्थ जलाश्रये ।
रमन्त्यो प्सरसो नन्ता गन्धर्वा मधुर स्वराः ॥१४॥

जहां तहां जलाश्रयों के निकट तीर्थ हैं वहां पर देवताओं के मन्दिर शोभित हो रहे हैं । उन बनों में अनन्त अप्सराएं नृत्य कर रही हैं; अनन्त गन्धर्व मधुर स्वर से गा रहे हैं ॥१४॥

श्रीमद्दशरथस्यापि राजन्ते साङ्गकानि च ।
सद्मानि सन्मयूषानि तोरणैर्मण्डितानि च ॥१५॥

जहाँ तहाँ महाराज श्री दशरथ जी के भी बड़े २ महल उपवन, सरोवर आदि अङ्गों से पूर्ण अपने तोरण कलशादिक भूषणों के प्रकाश से दशों दिशाओं को प्रकाशित कर रहे हैं ॥१५॥

वीराणाश्च सहस्राणि तिष्ठन्ति प्रतिगोपुरम् ॥
राज्ञस्तत्र च रक्षार्थं यत्नाय परिचारकाः ॥१६॥

जिनके प्रत्येक फाटकों पर हजारों वीर सुन्दर तरह से रक्षा कर रहे हैं महाराज ने उन महलों की रक्षा के लिए उन सब नौकरों को बड़े यत्न पूर्वक रक्खा है ॥१६॥

समयेदेवयात्रार्थं पौरः परिजनैः सह ॥
तत्रोषित्वा त्रिरात्रश्च राजा गच्छति स्वां पुरीम् ॥१७॥

कभी २ समय पर उन तीर्थ और देवताओं के दर्शन के लिए पुरजन और परिजनों के साथ यात्रा करके महाराज उन महलों में तीन रात्रि वास करके तब अपने अयोध्या नगर में चले आते हैं॥१७॥

अथातः सप्त प्राकाराः भ्राजन्ते भिन्न नामकाः ।
लसद्दाकाश शिखराः स्फटिकादि विनिर्मिताः ॥१८॥

अब ये सातों प्रकाशमान आवर्णों के प्रत्येक परकोटा का नाम अलग २ हैं; स्फटिक मणि से बने हुए इन परकोटाओं के शिखर बहुत ऊपर आकाश में शोभित हो रहे हैं ॥१८॥

प्रथमं दुर्जयो नामा विजयश्च द्वितीयकः ॥
तृतीयो विकटश्चैव तुर्य्यः सुविकटो महान् ॥१९॥

प्रथम परकोटा का नाम दुर्जय है, दूसरे का नाम विजय है, तीसरे दुर्ग का नाम विकट है; चौथे महान् दुर्ग का नाम सुविकट है ॥१९॥

पञ्चमो नभ कण्ठश्च षष्ठस्तु स्यात्सुतालकः ॥
सप्तमस्तालको नाम सर्वे तेऽरिभय प्रदाः ॥२०॥

पांचवे दुर्ग का नाम नभकण्ठ है; छटवे का नाम सुतालक है; सांतवे दुर्ग का नाम तालक है। ये सब दुर्ग शत्रुओं को भय देने वाले हैं ॥२०॥

कपाट तोरणै र्जाल गवाक्षै र्मणि मण्डितैः ॥
गोपुराणि विराजन्ते सप्त स्वावरणेषु च ॥२१॥

प्रत्येक दुर्ग के चारों दिशाओं के फाटक मणिमय तोरण; जाली; छज्जे; झरोखाओं से भूषित हीरा आदिक मणि जड़े हुए बड़े २ किवाड़ शोभित हैं। इन सातों आवरणों के प्रत्येक फाटकों में गोपुर बहुत ऊँचे प्रकाशमान शोभित हो रहे हैं ।।२१॥

वीराणाञ्च सहस्राणि रक्षितुं प्रतिगोपुरम् ॥
महाविक्रम युक्तानां धनुश्शक्त्यसि धारिणाम् ।।२२॥

प्रत्येक गोपुरों में उनकी रक्षा के लिये धनुष शक्ति आदि अस्त्र शस्त्रों से कसे हुए महा पराक्रमी वीर निवास करते हैं ॥२२॥

योजनानां द्वादशैव विस्तारः प्रथमस्यतु ॥
द्वाभ्यां द्वाभ्यां वाधिकान्य पराणि विद्धितत्क्रमात् ।।२३॥

इन सातों आवरणों में से प्रथमावरण ४८ कोश का विस्तार वाला है; दूसरा इससे दुगुना; तीसरा चौगुना इसी क्रम से सब आवरण हैं ऐसा जानो ॥२३॥

दुर्गस्योपरि गेहानि दुर्गागाराणि संज्ञया ॥
योजनैके षोडशैत्र तल क्रमेणैव सर्वतः ॥२४॥

उन दुर्गों के ऊपर जो महल हैं उनका नाम दुर्गागार है वे दुर्गागार प्रथम आवरण के ऊपर सोलह तल वाले एक योजन ऊँचे हैं इसी क्रम से सब में जानो ।।२४॥

दुर्गेषु च लघून्येवं राजन्ते सप्तसु क्रमात् ॥
दिशं प्रति चत्वार्येव द्वाराणि संस्कृतानि च ।।२५॥

सातों दुर्गों में इसी क्रम से छोटे २ करके शोभित हैं; प्रत्येक दुर्गागारों के चारों दिशाओं में फाटक हैं जो सुन्दर रचना से बने हैं ।।२५।

द्वारेषु च तद्गेहेषु काण्ड पृष्टाशतं शतं ॥
रक्षन्ति तेषु तेष्वेको मुख्यो जन बिराजकः ॥२६॥

उन दुर्गागारों के प्रत्येक फाटकों में शस्त्रों से जीविका करके रक्षा करने वाले सैकड़ों हैं प्रांत-द्वार के सौ में एक मुख्य है जो जन विराजक पदवी से उन सबकी रक्षा करता है ॥२६॥

तत्र तत्र दुन्दुभिस्स्या त्शतघ्नी तु दशोन्मिताः ॥
बृहद्द्वाराणि चत्वारि दुर्गाणाञ्च सुतोरणैः ॥२७॥

उन प्रत्येक फाटकों में दुन्दुभी आदि बाजे हैं तथा तोप मशीनगन आदि तो दशों दिशाओं की तरफ मुख करके रक्खी हैं। इसी प्रकार प्रत्येक दुर्गों के चारों दिशा वाले द्वार बहुत ऊँचे बने हुये तोरणों से शोभित हैं ।।२७॥

अक्षौहिण्य श्चतस्त्रश्च साधिक्षास्तत्र तत्रवै ॥
द्वाराद्वहि प्रतिष्ठन्ति वस्त्र गेहेपि सद्मसु ॥२८॥

हर दुर्गों के फाटकों पर चतुरंगिणी अक्षौहिणी सेना अपने अध्यक्षों के सहित द्वारों से बाहर वस्त्रों के महलों में ठहरी हुई है ॥२८॥

तिष्ठन्त्यहर्निशं चान्ये वहुशो द्वार पालकाः ॥
नवियुक्ता स्तेपि शस्त्रैः राज्ञि स्नेहान्विताश्च ते ॥२९॥

उनके शिविर के भी चारों फाटकों पर बहुत से द्वारपाल रात दिन रक्षा करते हैं। इस प्रकार की सेनाऐं भी महाराज में स्नेह रखती हुई अपने अस्त्र शस्त्रों से कभी वियुक्त नहीं होती हैं ॥२९॥

शाकेत पुर वाद्यानां गोपुरो परिवर्तिनाम् ॥
शृण्वन्ति पथिका नादं योजन द्वयतोवहि ॥३०॥

शाकेत नगर के इन परकेटाओं वाले फाटकों के बाजाओं का नाद आठ कोस बाहर तक की जनता को सुन पड़ती हैं ॥३०॥

गोपुराणां वहिर्भागे चत्वारि पीठकानि च ॥
रत्न प्राकार द्वाराणि विभ्राजत्तोरणानि च ॥३१॥

प्रत्येक दिशा के दुर्ग फाटकों से बाहर चारों दिशाओं में हाट लगते हैं उन हाटों के भी रत्नमय परकोटाओं के चारों दिशाओं में फाटक हैं जो तोरणादिकों से शोभित हैं ॥३१॥

दिग्संज्ञकानि सर्वाणि पूर्वस्यां पूर्व पीठकम् ॥
तेषु सर्वेषु सन्दर्भैः सघ्नहट्टाट्ट मालिकाः ॥३२॥

उन हाटों का दिशाओं के भेद से नाम है जैसे पूर्व पीठ, दक्षिण पीठादि। उन सब हाटों में ऊँचे अट्टालिका वाले सघन महलों की पंक्तियाँ हैं ॥३२॥

बसन्ति नैगमा स्तत्र विक्रये दूर देशिकाः ॥
राज्ञिप्रियपराः सर्वे श्रीराम मुख दर्शिनः ॥३३॥

उन महलों में दूर देशिक व्यापारियों से लेन देन व्यापार करने वाले बनिया (साहूकार) लोग निवास करते हैं ये सब बनिया लोग महाराज से प्रेम करने वाले श्रीराम मुख चन्द्र दर्शन के लोभी हैं ॥३३॥

यस्यां दिशः समायान्ति वाणिजा वस्तु नीतकाः ॥
निवसन्ति तद्दिग्पीठे नृपदत्तापणे गृहे ॥३४॥

बहुत बस्तुओं को लिये हुए जो बनिया जिस दिशा से आते हैं वे उसी दिशा के हाटमें महाराज श्री दशरथजी द्वारा दिए हुए घर में निवास करते हैं ॥३४॥

विपणोस्ति चन्द्रवारे पूर्व पीठे तु वस्तुनः ॥
दक्षिणे तद्द्वितीये च पश्चिमे तत्तृतीय के ॥३५॥

सोमवार को पूर्व पीठ में बाजार लगता है। मंगल को दक्षिण दिशा में, बुध को पश्चिम दिशा में ॥३५॥

उत्तरे तच्चतुर्थस्या देवं त्रिदिवसान्तरम् ॥
विक्रेतॄणां क्रायकाणां समाजश्चाद्भुतो भवेत् ।३६॥

बृहस्पति को उत्तर दिशा में बाजार लगता है इसी प्रकार तीन दिन का अन्तर देकर चारों दिशाओं में बाजार लगता है। इस प्रकार उन बाजारों में क्रेता—विक्रेताओं का अद्भुत समाज होता है ॥३६॥

विक्रेतारश्च ते सर्वे वस्तुनः स्वस्य स्वस्य च ॥
हट्टे हट्टाग्र भागे च कुर्वन्ति विस्तरं तदा ॥३७॥

सब के सब विक्रेता लोग अपने २ हाटों में अपनी २ दुकानों के आगे भाग में वस्तुओं को फैला कर लगाते हैं ॥३७॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषाया मुत्तरखण्डे श्रीरामधाम आवर्णबहिर्भाग वर्णनोनामएकचत्वारिंशत्तमःसर्गः ॥४१॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायाँ उत्तरखण्डे श्रीरामधाम बहिर्भाग वर्णनो नाम एकचत्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४१॥

भिन्नत्वेन च हट्टानां संहट्टाभिन्न वस्तुनः ॥
तांस्तान्संघट्टकान्सर्वे पृच्छन्गच्छन्ति क्रायकाः ॥ १ ॥

हाटों में प्रत्येक वस्तुओं के बाजार अलग २ हैं, क्रेता लोग उन प्रत्येक वस्तुओं के बाजारों को पूछते हुये जाते हैं ॥१॥

गजानामश्वकानाञ्च विनीताना तथापरे ॥
वाल्हिकानां सिन्धुजानां काम्बोजानां सुवाहिनाम् ॥ २ ॥

विनीत (साधे हुये) हाथियों और घोड़ाओं के जो कोई वाल्हिक तथा सामुद्रिक व काम्बोज देशिक सुन्दर वहन करने वाले ॥२॥

कुत्र चित्पारशीकाणामुच्चकानां सुवर्णिनाम् ॥
पारावारोद्भवानाञ्च मध्यदेशेषु जायिनाम् ॥ ३ ॥

तथा कहीं पर बहुत ऊंचे पारसी--घोड़े प्रत्येक रङ्ग के, दूर देशिक तथा मध्य देशिक उत्पन्न हुये ॥ ३ ॥

उष्ट्राणा म्वृषभाणाञ्च मृगाणाञ्च तथापरे ॥
महिषी माहिषाणाञ्च गवां मेषा जखड्गिनाम् ।।४॥

उसी तरह से देश २ के ऊंट और बैल, मृग इसी प्रकार भैंसी, भैंसा, गौ बकरी गेंडा ॥४॥

पाठितानां सुकानाञ्च कोकिलानां कलापिनाम् ॥
सारसानाञ्च हंशानां कादम्बानाञ्च युग्मतः ॥५॥

पढ़ाए हुए सुग्गा कोकिला मोर सारस हंस कल हंस जोड़े २ ॥५॥

चक्रवाक चकोगणांतित्तिराणां तथापरे ॥
कुक्कुभाणां वर्तिकाणां मद्गुकानां सुवर्णिनाम् ॥६॥

चकवा चकोर तीतर वन मुर्गा वतख जलकाग सुन्दर रङ्ग वाले ॥६॥

एतेषां गृह्यकाणाञ्च दूरदेशेषु जन्मिनाम् ।
विक्रेतारः समादाय पीठे विस्तारयन्ति च ॥७॥

ये सब और इन सबके रक्षक जो दूर देश से बेचने के लिए आये हुए हैं उन सबने उस हाट में अपने कायदे से अलग २ विस्तार कर रक्खा है ॥७॥

बिस्तारं हट्ट संहट्टे कुर्वन्ति सद्विभागतः ॥
नासत्यम्भाषमाणा स्ते सत्यायाः पीठकायने । ८॥

जो जिस वस्तु के बाजार जिस हाट के जिस खण्ड में सुन्दर विभाग पूर्वक दुकान खोले हुए हैं वे कोई असत्य बोलने वाले नहीं हैं क्योंकि यह बाजार ही सत्यानगरी का है ॥८॥

अथ च क्षौम वस्त्राणां कौषेयानां तथापरे ।
राङ्कवानाञ्च वस्त्राणां कार्पाशानांच वाणिजाः । ९॥

इसी प्रकार रेशमी वस्त्रों के बाजार में, कटिया; कोसा और कम्वलादिक ऊनी वस्त्रों के बाजार में तथा सूती वस्त्रों के बाजार में प्रत्येक वैश्य सुन्दर सत्यता पूर्वक व्यापार करते हैं ॥९॥

बिक्रेतारो मौक्तिकानां हीरकानां तथापरे ॥
मणीनां विद्रुमाणाञ्च देशतो भार वाहकैः ॥१०॥

जो मौक्तिक हीरा मणि विद्रुम आदि के भार के भार प्रत्येक देशों से ढुवा कर लाते हैं ॥१०॥

तथाहरि नखानाञ्च भिन्नानां तु गजास्यतः ।।
तथा च गजदन्तानां बिक्रेतारः समूहिताः । ११॥
अनाहत सुवर्णानां भारानादाय दूरतः ।।
देशतः सकटैश्चात्र विक्रेतारो महाधनाः ॥१२।

तथा इसी प्रकार बाघों के नख गजास्थि की बस्तु गजदन्तों की बस्तु लेकर विक्रेता लोग झुण्ड केझुण्ड ॥११॥

असीम उत्तम स्वर्णों के भारों को लेकर दूर देशों से बड़े २ धनिक लोग बैलों की गाड़ियों से बेचने के लिए लाते हैं ॥१२॥

बिक्रयार्थं चानयन्ति वहुलाभस्य लिप्सया ।।
नच मार्गेभयं तेषां कौशलेन्द्र प्रभावतः ॥१३।

बहुत लाभ के लालच से बेचने के लिए लाते हैं, महाराज कोशलेन्द्र जी के प्रभाव से किसी को कोई भय मार्ग में नहीं होता है ॥१३॥

पुङ्गीफलानां वहुसोभारानादाय वाणिजाः ॥
एलानाञ्च लवङ्गानां जायिकाना न्तथापरे ॥१४॥

सुपारियों के बहुत भार इलाइची व लोंगों के तथा जायफल आदि के बहुत भारों को बनिया लोग लेकर आते हैं तथा और भी ॥१४॥

जाती फलानां वहुसोऽग्नि शिखानां तथापरे ॥
कर्पूरागरू कस्तूरी कङ्कोलानाञ्चभारकैः ॥१५॥

बहु जाति के कलहारी. इन्द्रपुष्पी केसर आदि तथा कपूर अगरु कस्तूरी कण्कोल इन सबके भी भार ढो ढोकर बाजार में लाते हैं ॥१५॥

शकटैः पुर साकेत मृद्धिम त्परमं प्रजम् ।
उच्चध्वजो च्चप्राकारम् नेयन्ति वाणिजाश्चते ॥१६॥

बैलगाड़ी आदिकों से महान् ऐश्वर्यमान साकेतपुरके बाजार में जहां ऊंचे ध्वजा परकोटा महल हैं वहां बनिया लोग लाते हैं ॥१६॥

गजानां गज संघट्टे नवानां यूथकानिच ॥
विक्रेतृणां विराजन्ते समानि मेघ पंक्तिभिः ॥१७॥

नवीन हाथियों के झुण्ड नवीन हाथियों के बाजार में तथा इसी प्रकार व्यापारियों के हाथियों की पंक्ति मेघमाला के समान शोभित होती है ॥१७॥

घोटकाना ञ्च संघट्टे घोटकानां सुपंक्तयः-
काम्बो जवाह्लिकादीनां विक्रेत्रीणां पृथक् पृथक् ॥१८॥

घोड़ाओं के हाट में घोड़ाओं की पंक्तियां सुन्दर तरह से काम्बोज वाल्हीक आदि जाति भेद से बनियों ने अलग २ पंक्ति सजा रक्खी है ॥१८॥

एवं वृषभसंघट्टे बिक्रेत्रीणां पृथक् पृथक् ॥
समूहा भिन्न वर्णाश्च शोभन्ते पीठकायने ॥१९॥

इसी प्रकार बैलों के हाट में भिन्न-भिन्न जाति के बैलों को पंक्ति की पंक्ति (पैठ) में व्यापारियों ने शोभित कर रक्खा है ॥१९॥

गोसंघट्टे गवामेव मध्यमोत्तमभेदतः ॥
पङ्क्तयः परिभ्राजन्ते बिक्रेत्रीणां पृथक् पृथक् ॥२०॥

इसी तरह से गायों के हाट में गायों के उत्तम माध्यम भेद से पंक्तियां अलग २ प्रकाशमान हो रही हैं ॥२०॥

तथैव गृह्यकानाञ्च संघट्टे मृगपक्षिणाम् ॥
पञ्जरस्थायन्त्रिताश्चराजन्ते बहु पंक्तयः ॥२१॥

इसी प्रकार मृग पक्षियों को भी उनके पकड़ने वाले लोग पिंजड़ाओं में रखकर के पंक्ति के पंक्ति शोभित हो रहे हैं ॥२१॥

तथाच स्वर्ण संघट्टे स्वर्णाद्रेः पाद सन्निभाः ॥
आहतानाहतस्यैव भ्राजन्ते वहुशश्चयाः ॥२२॥

उसी प्रकार स्वर्ण के भी बस्तु बने हुए तथा विना बने हुए वहुत ढेर दूर ही से प्रकाशमान हो रहे हैं ॥२२॥

भ्राजन्ते रजतस्यैवं कैलाश पाद सन्निभाः ॥
वहुशश्च विक्रेत्रीणां समूहास्ते पृथक् पृथक् ॥२३॥

इसी प्रकार चांदी के भी कैलाश पर्वतसदृश बहुत ढेर तथा उनके व्यापारियों के सहित अलग अलग पंक्तियां शोभित हैं ॥२३॥

तथाहि वस्त्र संघट्टे वस्त्राणां सन्तिप्रस्तराः ॥
कलितानां स्वर्ण सूत्रैः राजार्हाणां महोच्चकाः ॥२४॥

इसी प्रकार वस्त्रों के हाट में बस्त्रों के बिछावन बिछे हुए हैं जो कि स्वर्ण सूत्रों से बने महान् महाराजाओं के योग्य हैं ॥२४॥

तथा च वित्त संघट्टे विस्तरो योजनायते ॥
विस्तस्य कुरु बिस्तस्य रजतान्चा श्चराशयः ॥२५॥

इसी प्रकार धन के हाट में कोसों के विस्तार तक विस्त (८० रत्ती भर सोना), कुरुविस्त (१२८ मासा सोना) नामक सोने तथा चांदी के भूषणों की पंक्ति के पंक्ति ढेर लगे हैं ॥२५॥

कोटचर्ब खर्ब संख्यानां धनदस्य मदापहा ॥
अनन्ताः परि राजन्ते साकेतपुर वासिनाम् ॥२६॥

कुवेर के मद को अपहरण करने वाले करोड़ों अर्बों खर्बों की संख्या में सम्पत्ति वाले अनन्त वैश्य श्रीसाकेतपुर के इस बाजार में शोभित हैं ॥२६॥

पादुका पीठ पर्यङ्क द्वारांग तोरणादिच ॥
मयूर पिक हंशादि वालक्रीडार्थकादि यत् ॥२७॥

कहीं चरण पादुकाओं के बाजार, कहीं सिंहासन पीढ़ा पर्यंकों के बाजार, कहीं पर तोरण खूंटी आदिक काठ की वस्तुओं के बाजार, कहीं पर मोर कोकिल हंसादि खिलौने काठ स्वर्णादि के बने हुए के बाजार ॥२७॥

स्वर्णेन रचित ञ्चैव क्वचिद्रजतनिर्मितम् ॥
क्वचित्ताम्रादि काष्ठादि निर्मितं हट्ट पंक्तिषु ॥२८॥

स्वर्ण के कहीं चांदी के कहीं तांबा के कहीं काष्ठ के खिलौने आदि वस्तुओंकी बहुत सी पंक्तियां लगी हुई हैं ॥२८॥

सूत्र चारित क्रीडार्थाः दर्शयन्तश्च कौतुकम् ॥
तेतुकौतुक संघट्टे भ्राजन्ते पीठकायने ॥२९॥

बहुत से खिलौने सूत्रों के द्वारा चलाकर दुकान्दार अद्भुत कौतुकों को दिखाते हैं। ऐसे खिलौने वाले भी पंक्ति की पंक्ति बाजार में कौतुकों को दिखा रहे हैं ॥२६॥

एवञ्च वस्तु संघट्टा वर्तन्ते शतकोटयः ॥
एकैकानां तु विस्तारो योजनानां चतुष्टयम् ॥३०॥

इस प्रकार की वस्तुयें करोड़ों की संख्या में बाजारमें शोभित हैं। ऐसी प्रत्येक वस्तुओं का विस्तार बाजार में चार योजन तक है ॥३०॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीतारामरत्न मञ्जूषायां मुत्तराख्याने वस्तु विपण हट्ट संघट्ट पीठस्थ वर्णनो नाम द्विचत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥४२॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां उत्तराख्याने वस्तु विपण हट्ट संटट्ट पीठस्थ वर्णनो नाम द्विचत्त्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४२॥

देशीयाश्च विदेशीयाः क्रयकाः सर्व वस्तुनां ॥
आगता धन मादाय हयेभरथ वाहनाः ॥१॥

इन वस्तुओं के खरीदने वाले लोग देश विदेश के बड़े दूर दूर तक के बहुत धन लेकर के घोड़े, हाथी, रथ, वाहनों में बैठकर आते हैं ॥१॥

बहवः कौतुकं द्रष्टुं यत्र जानपदा जनाः ॥
भूषिता वाहनै युक्ताः विचरन्ति दिदृक्षवः ॥२॥

तथा प्रजा (जनता) भी विविध प्रकार की भूषित सवारियों द्वारा बाजार के कौतुक को देखने के लिए आये हुये बाजार में इधर से उधर विचरते हैं ॥२॥

रथानांकिङ्किणीजालै र्गज घण्टोच नादितैः ॥
परस्परंभाषमाणाः शृण्वन्ति वर्णभाषणैः ॥३॥

उनके रथ आदिकों के किंकिणी समूह तथा हाथियों के घण्टा-नाद-इस प्रकार की सवारियों में बैठकर परस्पर बात करते हुए साफ अक्षरों में सुन्दर शब्द सुन पड़ते हैं ॥३॥

नियमा नधिकं किञ्चि द्विक्रेत्रीणां सुवस्तु षु ॥
रक्षतुञ्च वणीजानां भागधेयो विशाम्पतेः ॥४॥

कोई भी व्यापारी नियम से अधिक दाम न बढ़ा दे इसकी रक्षा के लिए महाराज श्री चक्रवर्ती जी का कर उगाहने वाला जिस महल में रहता है ॥४॥

तस्यार्ज कोस्त्यमात्य श्च पीठस्य मध्यभाग के ॥
योजनायत कक्षेतु सूचक ध्वजे गृहे ॥५॥

वह मन्त्री का घर उस बाजार के ठीक के मध्य भाग में है जो मध्यभाग एक योजन चौड़ा है उसके बीच में वह मन्त्री का महल प्रत्येक बाजारों को भाव सूचित करते हुए इस अनुकूल ध्वजा पताकादिकों से शोभित हैं ॥५॥

तद्गृहं हेमप्राकारं खचिद्रत्न सुतोरणम् ॥
दृढ वज्र कपाटञ्च गवाक्षै द्वार मण्डितम् ॥६॥

उस मन्त्री घर के बाहरी भाग में एक स्वर्ण का परकोटा है जो रत्नों से खचित सुन्दर ध्वजा तोरणादिवाला छज्जा झरोखाओं सहित हीरादिक रत्नोंसे भूषित वज्र-सदृश मजबूत किवाड़ वाला है ।६।

रत्नस्तम्भालिकाभाषं चित्रभित्ति चमत्कृतम् ॥
दीव्य त्पट पिधानैश्च वितानैः खण्डमण्डितम् ।७॥

वह महल रत्नों की खम्भावलियों से प्रकाशमान चित्रों से रचित दिवाल बड़े चमत्कार वाला है। जहांतहां कोठाओंपर कमरेमें वितान परदे बिछावन आदिक दिव्य बस्त्रों से प्रत्येक खंड भूषितहैं॥७॥

सोमात्य स्तत्सभागारे भ्राजमानो जनै र्वृतः ॥
पीठस्था ।बाणिजाय।वत्तन्निर्देशात्प्रवर्त्तकाः ॥८॥

उस सभागार में अपनी फौज पलटन नौकर चाकर आदि जनों से मन्त्री महोदय अत्यन्त प्रकाशमान हैं। उस बाजार का प्रत्येक बनिया उन्हीं मन्त्री महोदय के निर्देश से चलते हैं॥८॥

कौतुकं दिदृक्ष् राजा कौशलेन्द्रो सनातनः ॥
तद्गृहे भागधेयाख्ये समागत्य बिराजते ॥९॥

कभी २ सनातन महाराज श्री कोशलेन्द्र जी कौतुक देखने की इच्छा से उस बाजार में आते हैं तो उसी भाग धेय [तहसिल] नामक महल में निवास करते हैं ॥९॥

बिपणस्य दिने दिव्यै राजवृन्दै सुसेबितः ॥
बशिष्ठ प्रमुखैर्दिव्यै र्ब्राह्मणैश्च समावृतः ॥१०॥

दिव्य राजाओं के झुण्ड से सुसेवित तथा श्री वसिष्ठादि प्रमुख्य ब्राह्मणों से घिरे हुए महाराज श्री दशरथ जी बाजार के दिन पैठ देखने आते हैं ॥१०॥

खचिद्रत्न रथारूढ़ा दिव्या भरण भूषिताः ॥
स्वर्णदण्ड धरै र्भृत्यैः काण्ड पृष्टैः परिवृत्ताः ॥११॥

दिव्य रत्नों से खचित रथों पर बैठ करके दिव्य भूषणों से भूषित, स्वर्ण दण्ड धारण किये हुए नौकरों से तथा अस्त्र शस्त्र धारण किये हुए नौकरों से घिरे हुए ॥११॥

पैठे तु कौतुकं द्रष्टु मागतास्ते पीतस्ततः ॥
भ्रमन्ति भ्राजमाणास्ते वैश्या वैश्रवणाधिकाः॥१२॥

कुवेर से अधिक ऐश्वर्य वाले वनिया लोग कौतुक देखने के लिए आये हुए इधर से उधर सवारियों द्वारा घूमते हुए प्रकाशमान हो रहे हैं ॥१२॥

तेजसार्कं समाश्चार्क बन्श्या विक्रम शालिनः॥
गजारूढा हयारूढा रथारूढा विभूषिताः ॥१३॥

तेज में सूर्य के समान महान् पराक्रम शाली सूर्यवंश में उत्पन्न हुये बहुत से राजा लोग कोई हाथियों पर चढ़े हुए; कोई घोड़ाओं पर चढ़े हुए, कोई रथों पर सवार सुन्दर भूषित अङ्ग वाले ॥१३॥

स्वसैन्यै श्चावृताः सर्वे द्रष्टुं पीठोत्सवं तदा ॥
समागत्य विराजन्ते भ्रमन्तो विस्तृते च णाः ॥१४॥

अपनी सेना से घिरे हुए उस पैठ के उत्सव को देखने के लिये आए हुए विशाल नेत्रों से देखते हुए वाजार में घूम रहे हैं ॥१४॥

श्रीमन्महेन्द्र मुकुटा नत पादाब्ज पीठकः ॥
कौशलेन्द्रो पंक्तिरथः पार्थिवैर्वहुभिर्वृतः ॥१५॥

इस प्रकार के वहुत राजाओं से घिरे हुये महेन्द्र से पूजित चरण पादुका वाले श्री मान कोसलेन्द्र श्री दशरथ जी ॥१५॥

देवाभिलषिते दिव्ये बिमाने सुविशालके ॥
कल्पितान्तर खण्डे च रत्नस्तम्भावलिचराघृते ॥१६॥

देवता भी जिसकी अभिलाषा करते हैं ऐसे बहुत विशाल दिव्य विमान के अन्दर रत्न खम्भावलियों से सुशोभित महान् रचना युक्त किसी एक खण्ड में बैठे हुये हैं ॥१६॥

तोरणध्वज वितानैश्च शोभिते परमाद्भुते ॥
सहस्रैश्च जनै र्वाह्ये स्थित्वाविद्वत्समाजकैः ॥१७॥

जो विमान परम अद्भुत तोरण ध्वजा वितानों से सुशोभित है हजारों जन जिसको ढोतेहैं ऐसे विमान पर बैठ कर विद्वत् समाज ॥१७॥

बशिष्ठ वामदेवाद्यैः शैन्यैश्चापि चतुर्विधैः ॥
छत्र चामर शोभी च किरीटादि विभूषणैः ॥१८॥

श्री वशिष्ठ, वामदेव आदि उसी प्रकार चतुरंगिणी सेना के सहित छत्र चवँर, क्रीट, कुण्डलादि भूषणों से सुशोभित ॥१८॥

भूषितश्च महातेजा दुन्दुभिध्वज सूचितः ॥
स्व नाम जय शब्देन जनैः शृण्वन्यशोच्चकैः ॥१९॥

भूषित दुन्दुभी, ध्वजादिकों से शोभायमान दूर तक है प्रसिद्ध महान् तेज जिनका ऐसे स्व नाम धन्य महाराज श्री अवधेश श्री चक्रवर्ति जी की जय हो—ऐसे ऊँचे शब्दों से जनता के द्वारा अपने यश को सुनते हुए महाराज श्री दशरथ जी चल रहे हैं ॥१९॥

स्वस्याग्रे नृत्य सांगीतं शृण्वन्पीठे सुकौतुकम् ॥
द्रष्टु ङ्गोलोक नाथो सा वाज गाम जगत्प्रभुः ॥२०॥

आप के आगे नृत्य, गान, सङ्गीत हो रहा है उसको सुनते हुए सब जगत के प्रभु गो लोक नाथ ये महाराज श्री दशरथ जी पैठ के कौतुक को देखने के लिये वाजार में आ पहुँचे ॥२०॥

पीठे दर्शयितुं भ्रातृ न्कौतुकं भ्रातृवत्सलः ॥
गमिस्यति गजारूढः श्रीरामो सुन्दरेक्षणः ॥२१॥

अपने भ्रातओं पर वात्सल्य रखने वाले सुन्दर नेत्र श्रीराम जी हाथी पर चढ़ करके भ्राताओं को पैठ का कौतुक दिखाने के लिये चलेंगे ॥२१॥

सुविद्य श्चामात्य पुत्रो विचिन्त्येति तदा भृशम् ॥
सैन्यञ्च वाहनं सर्वं भूषायुक्तमकारि च ॥२२॥

ऐसा विचार कर मंत्री कुमार श्रीसुविद्य जी उस समय शीघ्र सेना, सवारी आदिक सब को भूषण आदि साजों से युक्त कराए ।।२२।।

पुनः क्रमेण विन्यासः स्यन्दने भाश्वपत्तिभिः ।
समवर्णैं भूषणैश्च ध्वजनी पंक्तिभिः कृता ।।२३।।

और क्रमशः हाथी, घोड़े; रथ, पैदल आदि बहुत सी सेनाओं का भी समान रङ्ग से, प्रत्येक के यथा योग्य जाति भेद करके भूषणों से, ध्वजा पताकादि सजावट से सुन्दर पंक्तियों को करके नियुक्त किया ।।२३।।

स्वर्ण सूत्रैर्निर्मितानां वस्त्राणाञ्च बृहद्ध्वजाः।।
रत्न मुक्ताञ्चित प्रान्ताः कुदाल द्रुम चिन्हिताः ।२४।

बड़ी ऊँची ध्वजाओं वस्त्र स्वर्ण सूत्रों से बने हुए हैं उनमें रत्न मुक्ता आदिकों से किनारे रचे हुए तथा बीच में भी कुदाल कचनार के बृक्ष स्वस्तिक आदि चिन्ह बने हैं ।२४।

तानादाय बृहद्दण्डान् गजारोहाः सुभूषिताः ।।
शत सादि समायुक्ताः शक्तिकैश्च परिवृत्ताः ।।२५।।

उन ध्वजाओं के बहुत बड़े दण्डों को पकड़े हुए सेवक सुन्दर वस्त्र भूषणों से भूषित हाथियों पर बैठे हुये हैं। वे ध्वजाएँ सैकड़ों घुड़ सवारों से तथा बहुत से शक्ति धारियों से घिरे हुए सुरक्षित हो रहे हैं ।।२५।।

एतैः प्रथम बिन्यासो दुन्दुभीना मनन्तरम् ।।
घनोच्चघोष युक्तानां निषादीभिरिभोच्चकाः ।।२६।।

इस प्रकार यह पहला बिन्यास खण्ड है दूसरा मेघों के समान महान् गर्जना करने वाला दुन्दुभियों का विन्यास है वह भी ऊंचे हाथियों से शोभित सैकड़ों हाथी सवारों द्वारा सुरक्षित है ।।२६।।

शक्तिकानां सतञ्चैव एकस्यैवानुवर्त्तिकम् ।।
शादिनाञ्च शतञ्चैवं यथा पूर्वं प्रवर्त्तते ।।२७।

एक एक की सैकड़ों शक्ति धारी, तथा सैकड़ों घुड़ सवार पूर्व की ही तरह से वर्ताव करते हुये साथ में चल रहे हैं ।।२७।।

एवमश्वध्वजानाञ्च विशालानां सुभूषिताः ।।
शक्तिकानां गणै युक्ता दुन्दुभीनां गजानुगाः ।।२८।।

इसी प्रकार घोड़ों पर ध्वजाओं का विन्यास महान् शक्तियों के गण से सुरक्षित विशाल तथा सुन्दर भूषित है जो कि दुन्दुभी वाले गज विन्यास के आगे चल रहा है ।।२८।।

एवमश्व दुन्दुभीनां प्रत्येकः शक्तिकान्विताः ।।
पूर्वं द्वे च इमे द्वे च बिन्यासानां चतुष्टयम् ।।२९।।

इसी प्रकार घोड़ाओं पर दुन्दुभी का विन्यास सुन्दर शक्तियों से सुरक्षित है। पहले के दो और पीछे वाले दो इन चार विन्यासों का एक चतुष्टय हुआ ।।२९।।

भेरीध्माश्च शङ्खध्माश्च तथा प्रणव वाद्यकाः ॥

झर्झराणां वाद्यकाश्च वैष्णवानां समूहकम् ॥३०॥

भेरी को बजाने वाले, तथा संख को बजाने वाले, उसी प्रकार पणव बजाने वाले; और झर-झरों को बजाने वाले; बंशी बीणा आदिक वाजाओं के बजाने वालों का समूह ॥३०॥

एवमातोद्यकानाञ्च वादकाः दिव्यरूपकाः ॥

बिन्याशः पञ्चमस्तेषां काण्ड पृष्टाग्र वर्तिकाः ॥३१॥

इस प्रकार तत (तारके बाजा) घन (कांशे के बाजा) आनद्ध (चमड़े के बाजा) सुषिर (हवा के बाज) ये चारो प्रकार के अनन्त बाजाओं के बजाने वाले दिव्य रूप धारियों का यह पाँचवा विन्यास है जो शस्त्र धारी सेना के आगे चलता है ॥३१॥

लक्षमेकं शक्तिकानां भूषया शुभ्रवर्णकम् ॥

वादित्राग्रं बिभात्येवं विन्यासः षष्ठमः शुभः ॥३२॥

इन बाजा विन्यास के आगे छटवाँ एक लाख शक्ति धारी, जो सफेद वर्ण के भूषणों को पहने हैं उनका विन्यास शोभित है ॥३२॥

ततः खड्ग धराणाञ्च लक्षैकं शक्तिकानुगम् ॥

भूषया नील वर्णञ्च बिन्यासोयं सुसप्तमः ॥३३॥

उसके आगे एक लाख खड्ग धारियों का सातवां विन्यास है जो अपने भूषण पहिनाव से नील वर्ण का है ॥३३॥

ततो धनुष्मतां लक्षं रक्तवर्णञ्च भूषया ॥

बादित्राग्रं बिभात्येवं बिन्याश श्चाष्टमोमहान् ॥३४॥

उसके आगे एक लाख धनुष धारियों का विन्यास है जो अपने वस्त्र भूषणों से लाल वर्ण का शोभित है। इस प्रकार यह आठवां विन्यास महान शोभित है ॥३४॥

रूप्य दण्ड धराणाञ्च लक्ष्यैकं पीत वर्णिकम् ॥

भूषयाभ्राजमानञ्च बिन्यासो नबमस्त्वयम् ॥३५॥

उसके आगे एक लाख चांदी के दण्डों को धारण करने वाले अपने भूषण बस्त्रों से पीले रङ्ग के प्रकाशमान हैं यह नौवाँ विन्यास है ॥३५॥

स्वर्ण दण्ड धराणाञ्च लक्ष्यैकं पीत वर्णकम् ॥

भूषयाभ्राजमानञ्च बिन्यासो दशमस्त्वयम् ॥३६॥

उसके आगे एक लाख स्वर्ण दण्ड धारण किये हुए अपने वस्त्र भूषणों से पीले रङ्ग के प्रकाशमान यह दशवाँ विन्यास है ॥३६॥

युक्तानां भूषणैर्युक्ता मुक्तादण्ड धरा वराः ।

लक्षैकं राजते तेषां बिन्यासैकादशीप्यसौ ॥३७॥

मुक्ताओं के भूषणों से युक्त, मुक्ताओं के दण्डों को हाथों में लिये हुए एक लाख सिपाहियों की फौज—यह ग्यारहवां विन्यास है ॥३७॥

एषा मनुगतादिव्यै भूषणैश्च विभूषिताः ॥
गजानां पंक्तयः सन्तिबिमानैः पृष्ट शोभिताः ॥३८।

इनसे आगे दिव्य वस्त्र भूषण से भूषित पीठ (पैठ) में विमानों से शोशित हाथियों की पंक्तियां हैं ॥३८॥

अग्रेपश्चा त्पार्श्वभागे शक्तिकानाङ्गणै वृ ताः ॥
घण्टा संघट्ट नादाश्च बिन्यासोयं तु द्वादशः ॥३९॥

इन गज पंक्तियों के आगे पीछे अगल बगल भागों में शक्ति को धारण किये हुए रक्षा कर रहै हैं इस प्रकार घण्टा समूहके नाद से शोभित यह बारहवां विन्यास है ॥३९॥

एतस्यानुगतं दिव्यं हस्ति स्यन्दन वृन्दकम् ॥
स्वर्णाद्रि शिखराकारं पताका सच्चमत्कृतम् ॥४०॥

इसके आगे दिव्य हाथियों के रथों का झुण्ड स्वर्ण पर्वत के आकार में ध्वजा पताका चमत्कार कर रहे हैं॥४०॥

रत्न स्तम्भार्चिषाम्वृन्दै रातन्वन्मुक्त तोरणम् ॥
झंकृतं किंकिणी जालै द्वात्रिंश च लसत्क्रमम् ॥४१॥

वे हाथियों के रत्न खम्भावलियों से प्रकाशमान, मुक्ता तोरणों से भूषित, किंकिणी जालों से झनकार करते हुए शोभित हैं। बत्तीस २ के क्रम से ॥४१॥

शादिनाञ्च शक्तिकाना मग्रे पृष्टे च पार्श्वके ॥
गणैर्युक्तं बिभात्येवं विन्याश स्तत्त्रयोदशः ॥४२॥

आगे, पीछे, अगल, बगल घुड़सवारों के गण तथा शक्ति लिए हुए फौज के गण रक्षा कर रहे हैं, इस प्रकार यह तेरहवां विन्यास हुआ ॥४२॥

एतस्यानुगता श्चात्र हयाः काम्बोज देशिकाः ॥
रत्न भूषाः सुर्ललिताः ललिता लोल वृत्तयः ॥४३।

इसके आगे काम्बोज देशीय घोड़े बड़ी सुन्दर चंचल वृत्ति वाले, सुन्दर रत्नों से भूषित ॥४३॥

लास्ये च साधिता स्ताल कलया नृत्यका यथा ॥
भृत्यैश्चामर हस्तैश्च सेविताः शुभलक्षणाः ॥४४॥

जो विविध प्रकार के भावों को प्रगट करने में सुन्दर ताल से नृत्य की कलाओं को प्रगट करने में सुन्दर सिखाये गये हैं जिन प्रत्येक के अगल बगल सुन्दर लक्षण वाले सेवक हाथ में चँवरलेकर के सेवा कर हैं ॥४४॥

विधानिताश्च प्रत्येकं कौतूहल विधानकाः ॥
चतुर्दशोयं विन्याश एतैरेव प्रपूरितः ॥४५॥

प्रत्येक घोड़ा सुन्दर कौतुकों के विधान से सजाये गये हैं इस प्रकार यह इन घोड़ाओं से भरे हुए कई पंक्तियों का मण्डल-यह चौदहवां विन्यास है॥४५॥

एतस्याः नुगताः शुभ्राबाल्हिका श्चाविभूषिताः ॥
तेपि नृत्येषु कुशलाः सेव्यमानास्तु चामरैः ॥४६॥

इनके आगे बाल्हिक देश के सफेद घोड़ा जो कि विना ही आभूषणों के हैं वे भी पूर्व की तरह सेवकों द्वारा चँवर आदि मौजों से सुसेवित नृत्य कला में बड़े कुशल हैं ॥४६॥

झंकृताः पान सञ्चारैः शाक्तिकैः परिवारिताः ॥
पठिता इति निर्बाधा वन्धुराः सुन्दर स्यकाः ॥४७॥

शक्ति को धारण करने वाले सेवकों से चारों तरफ सुरक्षित सुन्दर मुख वाले बहुत ऊचे काम पड़ने पर नीचे हो जाने वाले भी, इस प्रकार के नृत्य कला में पढ़ाये हुए अपने चरणों के नूपुरों को सुन्दर ताल पूर्वक बजा रहे हैं ॥४७॥

एवंपञ्च दशो न्याशः पारशीका स्तथा विधाः ।
षोडशोयञ्च विन्याश स्तदनुगा वनायुजाः ।४८॥

इस प्रकार का यह पन्द्रहवां विन्यास हुआ तथा इसके आगे इसी प्रकार पारसी जाति के बनायुज घोड़ों का भी सोलहवां विन्यास है ॥४८॥

एतस्या नुगता दिव्याः हयस्यन्दन शोभनाः ॥
रौप्य निर्मित सर्वांगाः पताकाः चय संचिताः ॥४९॥

इसके आगे स्वर्ण से सर्वाङ्ग रचित, दिव्य घोड़ा जिनमें लगे हैं, ऐसे ध्वजा पताकादिक सजावटों से युक्त रथ हैं ॥४९॥

किंकिणी जाल झंकारा श्चक्र काष्टक संक्रमाः ॥
नील रत्न ज्वल स्तोम तोरणैः सच्चमत्कृताः ॥५०॥

जिनमें काठ के सुन्दर पहिये सजे हुए हैं, नील रत्नों के ज्वाला सदृश सुन्दर तोरण बहुत जिनमें चमत्कार कर रहे हैं ऐसे वे रथ चलते हुए अपने किंकिणियों जालों का झनकार मचाते हैं ॥५०॥

बिन्यासोयं सप्तदश स्ततः काञ्चन स्यन्दनाः ॥
पताका तोरणै र्दिव्यै र्वसु चक्रै विराजिताः ॥५१॥

यह सत्रहवां विन्यास है इसके आगे स्वर्ण के रथ आठ चक्र वाले अपने पताका तोरणादि दिव्य भूषणों से प्रकाशमान हैं ॥५१॥

भूषिताष्ट हयैर्युक्ताः किंकिणी घण्टिका न्विताः ॥
विद्यु त्पुञ्ज प्रतीकाशा स्तैर्विन्याशो दशाष्टकः ॥५२॥

जिनमें आठ घोड़े लगे हैं तथा किंकिणी और घन्टिका लगे हुए हैं, बिजली के समूहों के समान जो प्रकाश कर रहे हैं इस प्रकार के रथों का यह अठारहवां विन्यास है ॥५२॥

ततश्चा नन्तरं वास्त्राः स्यन्दनाः सद्विभूषिताः ॥
पंक्तिभिर्भिन्न वर्णानांविधानं गणकै र्वृतम् ॥५३॥

उसके आगे सुन्दर विभूषणों से भूषित वस्त्रों से निर्मित रथ हैं जो भिन्न २ रङ्ग की पंक्तियों से सुन्दर विधान पूर्वक तथा अपने सेवक गणों से सुरक्षित हैं ॥५३॥

एवञ्चसुख जानानि भूषितानि सुभूषणैः ॥
एव सुप जान संघा व्यूहेन च विधानिताः ॥५४॥

इसी प्रकार आगे सुन्दर भूषणों से भूषित अपने व्यूहों से विधानित सुखपालों का समूह है इसके आगे उपजानों का भी समूह है ॥५४॥

आरोहणार्थं रामस्य बयस्यानां गजादिकम् ॥
पंक्त्या विधानं कृतवान्सुविद्यः सविधंयतः ॥५५॥

इन प्रत्येक हाथी रथादिक सवारियों में सखाओं के सहित श्रीरामजी आदि सवारों के चढ़ने के लिए सीढ़ी आदि इन्तजाम भी सुन्दर विधान पूर्वक पंक्ति की पंक्ति श्री सुविद्य जी ने रचना कर रक्खी है ॥५५॥

इति श्री शङ्करकृते श्रीअमर रामायणे श्रीसीताराम रत्न मञ्जूषाया मुत्तराख्याने
शैन्यविन्याश वर्णनं नाम त्रिचत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥४३॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां उत्तराख्याने
शैन्य विन्यास वर्णनं नाम त्रिचत्त्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४३॥

कनकभवन खण्डे चित्र हर्म्य प्रकोष्टे-
महिप सुत समाजे तारकानामिवेन्दुः ॥
दिन मणि कुलभानुः सा नुजो रामभद्रो-
बिलशति बिशिषासं बाणमादाय हस्ते ॥१॥

सूर्यकुल के सूर्य श्रीराम जी हाथों में चित्र विचित्र धनुष तथा वाँण को लिए हुए अपने भाइयों के साथ तथा बहुत से राजकुमारों के समाज की भीड़, मध्य, श्री कनक भवन के किसी एक चित्र विचित्र सर्वतोप महल के खण्ड के अन्दर आंगन में बैठे तारा के बीच में चन्द्रमा की तरह से शोभित हैं ॥१॥

इत्यन्तरे चानत नेत्रशोभी सौमित्री रात्मानमपेक्षितं तत् ॥
मन्दं सुमन्दं बिहसञ्च ज्येष्टं समब्रवीत्सौम्य सुभाव रामम् ॥२॥

इसी समय के बीच सुन्दर सुकुमार स्वभाव वाले श्रीराम जी मन्द मुस्कराते हुए जिनका स्मरण कर ही रहे थे सुशीलता व नम्रता से झुके हुए नेत्र वाले सुन्दर श्री सुमित्रा नन्दन अपने ज्येष्ठ भ्राता श्रीराम जी से मन्द २ मुस्काते हुए सुन्दर बाणी से बोले ॥२॥

आर्य्याद्य एवात्र क्षणं समेतो महेन्द्रनाथो गुरुणाहि द्रष्टुं ॥
जगाम पीठं कुतुकान्वितं तत्साकं समीहे भवताहमेव ॥३॥

हे आर्य्य! आज इसी क्षण ही गुरू महाराज के सहित महेन्द्रनाथ श्री पिता जी विविध प्रकार के कौतुकों से पूर्ण पैठ को देखने के लिए जारहे हैं इस लिए मैं भी आपके साथ जाना चाहता हूँ ॥३॥

भ्रातु र्वचः प्रीति मतस्तु प्रीत्या श्रुत्वा समीपस्थ ममात्यपुत्रम् ।
समब्रवीद्राघव सुन्दराक्षः शीघ्रं कुरु ष्वेति समग्रकारम् ॥४।

इस प्रकार अत्यन्त प्रेम से भरी हुई भाई के बात को सुनकर स्नेह में भरे पास में बैठे मन्त्री कुमार को सुन्दर नेत्र वाले श्रीराम जी बोले कि मेरे चलने का समस्त इन्तजाम शीघ्र करो ॥४॥

श्रवः सुखं श्रूय रघूद्वहस्य बिचक्षणो वाक्य ममात्य पुत्रः ।

उत्थाय वध्द्वाञ्जलिमब्रवीत्त म्महेन्द्रनाथस्य कुमार रामम् ।।५॥

कानों को अत्यन्त सुख देने वाली श्रीराम जी की वाणी को सुनकर बड़ी सूक्ष्म बुद्धि वाले मंत्री कुमार महेन्द्र नाथ कुमार श्रीराम जी को हाथ जोड़ कर बोले ॥५॥

सज्जी कृतं सैन्य सुमन्त नागम्मया तु पूर्वं गमनाय पीठे ।

त्वंशीलय स्वश्चित शोभनाङ्गे नवां सु भूषांभुवनेशसूनो ।।६।।

हे भुवनेश कुमार ! मैंने आपके पैठ को देखने को जानेका इन्तजाम सुमन्त (सत्रुञ्जय)नामक हाथी तथा उसकी रक्षा के लिए सेना की सजावट पहले से ही कर रक्खी है आप अपने नवीन सुन्दर अङ्गों में सुन्दर नवीन भूषणों को धारण कराइये ,,६,-

ततस्तद्वचनं श्रुत्वा मात्यपुत्रस्यधीमतः ॥

स्वाबरोधं समागम्य ज्ञापिता प्राणवल्लभा ।७।।

बड़े बुद्धिमान मन्त्री कुमार के इस बचन को सुनकर श्रीरामजी कनकभवन में गये, अपनी प्राण बल्लभा श्रीकिशोरी जू को सब बात जनायी ॥७॥

सखीगण समाधिष्ठा जानकी शीलसद्व्रता ॥

सा रामं प्रत्युबाचेति गमिष्याभि त्वयासह ॥८॥

सुन्दर शील सद्व्रतों से युक्त सखीगणों के बीच में बैठी हुई श्रीजानकी जी भी श्रीराम जी को बोलीं कि मैं भी आपके साथ चलूंगी ।।८॥

ततः पर्य्यंकमास्थाय परार्द्धै वस्त्रभूषणैः ॥

भूषितो रस वत्प्रीत्या जानक्या स्यामल प्रियः ॥९॥

उसके बाद पलँग पर बैठ करके बिस कीमत य वस्त्र भूषणों से; रसमयी प्रीति से श्रीजानकी जी ने अपने प्रियतम श्याम सुन्दर को भूषित किया ॥९॥

ततः परञ्च तेनापि बल्लभा रसिकात्मना ।

भूषिता रामचन्द्रेण सीता सुन्दर विग्रहा ॥१०॥

उसके बाद रसिकात्मा श्रीरामचन्द्र जी ने भी सुन्दर विग्रह वाली श्रीसीता जी को भूषित किया ॥१०॥

सीता सरोज नयना रामो राजीव लोचनः ।।

मणिपर्य्यंङ्क मास्थाय सखीगण परिवृतौ ।११।।

इस प्रकार कमल नयनी श्रीसीता राजिव लोचन श्रीराम जी सखिगणों से घिरे हुए मणिमय पर्यङ्क पर बैठ गये ॥११॥

सर्वाङ्गादर्शकादर्शे परस्पर विमोहनं ॥
परस्पर श्च पश्यन्तौ लेभाते सुखमद्भुतं ॥१२॥

सर्वाङ्गादर्श दर्पणमें परस्पर अत्यन्त मोहक छविको देखते हुए अद्भुत सुख के लोभ से परस्पर मोहित होगये ॥१२॥

सख्याहस्तात्समादाय पक्व ताम्बूल वीटकाम् ॥
परस्परम्मुखेदत्वा मुदंयातः प्रिया प्रियौ ॥१३॥

सखी के हाथ के पके हुए पान का वीरा लेकर परस्पर मुखमें देते हुए दोनों प्रिया प्रिय आनन्द को प्राप्त हुए ॥१३॥

कृत्वैवं सुरहस्यन्तु प्रियामोद करं परम् ॥
हस्तेहस्तंसमादाय प्रियाया रघुनम्दनः ॥१४॥

हे प्रिय ! वह परम आनन्द को देने वाला रहस्य कौतुक कहां है इस प्रकार पूछती हुई प्रिया जू के हाथ को अपने हाथ से पकड़ कर श्रीरघुनन्दन जी ॥१४॥

समागत्याष्टमं द्वार मवरोधस्य मोहनः ॥
सच प्रियां समाश्लिष्य बचनञ्चाब्रवीत्प्रियम् ॥१५॥

कनकभवन के आठवें द्वार वाले महल में आकर के अपनी प्रिया को आलिंगन किए हुए मन मोहन श्रीराम जी अत्यन्त प्रिय बचन वोले ॥१५॥

यदी त्वसि प्रिये पीठे कौतुकं द्रष्टुमद्भुतम ॥
गमिष्यति यदा माता ममापि त्वं तया समम् ॥१६॥

हे प्रिय ! पैठ के अद्भुत कौतुक को देखना यदि चाहती हो तो जिस समय मेरी माताजी जांयेंगी उस समय उनके साथ तुम भी मेरे बराबर में आना ॥१६॥

इत्युक्त्वा बहिरागत्य रोचिष्णू रघुनन्दनः ॥
सखिभिर्भ्रातृभिर्सार्कमेत्य द्वारं समाययौ ॥१७॥

इतना अपनी प्रिया जू को कहके अत्यन्त सुन्दर श्रीरघुनन्दन जी वहां से कनकभवन के फाटक में आकर अपने सखा और भाइयों के साथ में इकट्ठे होकर ॥१७॥

गजञ्चा धोरणै र्नीतं खचिद्रत्न बिमानकम् ॥
सर्वांग भूषितं प्रांशु मास्थाय भ्रातृ बत्सलः ॥१८॥

पीलवानों से चलाये गये सर्वाङ्ग से भूषित हाथियों के पृष्ठ में रत्नों से खचित विमान पर अगल बगल में अपने भ्राताओं को बैठा करके बीच में आप बैठ गये ॥१८॥

एवं भरत सत्रुघ्न लक्ष्मणै र्रुचिरा कृतैः ॥
छत्र चामर हस्तै श्चा बृतोगन्तुम्प्रचक्रमे ॥१९॥

इस प्रकार प्रिय सुन्दरता वाले भरत, शत्रुघ्न लक्ष्मण जी के द्वारा छत्र चवँरादि से सेवित हो कर चलने के लिए तैयार हुए ॥१९॥

उच्चप्रासाद द्वारिस्था गजस्थं प्राणवल्लभम् ॥
सीता पश्यति सीतांशुं शुभास्या रघुनन्दनम् ॥२०॥

उन ऊंचे महलों के फाटकों पर सखियों के साथ आयी हुई, चन्द्रमा के समान प्रकाशमान सुन्दर मुख वाली श्रीसीता जी ने अपने प्राण वल्लभ श्रीरघुनन्दन जू को हाथी पर बैठाकर चलने के लिये तैयार हुए देखा ॥२०॥

अट्टादट्टान्तरं क्रम्य सखीगण परिवृता ॥
सीतापश्यति शीलाढ्यी पत्युर्गज विमानकम् ॥२१॥

तो अपनी सखिगणों से घिरी हुई महलों की एक छत से दूसरी छत को अति क्रमण करती हुई सुन्दर शील से भरी नेत्रों से श्रीसीता जी हाथी के विमान में बैठे हुए अपने प्रियतम को देखतीं जा रही हैं ॥२१॥

प्रिये दृष्टयन्तरे जाते जानकी बिरहातुरा ।
तदा प्रिया सखीभिस्ता नीता श्वश्रू गृहंपुनः ॥२२॥

इस प्रकार प्रियतम को दृष्टि से ओझल हो जाने पर श्रीजानकी जी विरह से बेचैन हो गयीं उस समय सखियां स्वामिनी जू को सास के घर में ले आईं ॥२२॥

तदातत्र च कौशल्या सुमित्रा कैकयी च तां ॥
बधूबालां लालयन्ति क्रीडा कौतुक शिक्षया ॥२३॥

वहां पर श्री कौसल्या, सुमित्रा, कैकयीजी अपनी बाल बधूवों को खिलौना, खेल, कौतुक शिक्षा द्वारा लाड़ प्यार कर रही हैं ॥२३॥

इत्यन्तरे रामचन्द्रो महाशैन्य परिवृतः ॥
दुन्दुभीनांमहाघोषै र्मातृ सन्निधिमागतः ॥२४॥

इसी बीच में श्रीरामचन्द्र जी भी महान् सेना से घिरे हुए दुन्दुभी आदि वाजाओं तथा सेवकों के शब्दो से महान् घोष पूर्वक माता जी के समीप में आगये ॥२४॥

तदाश्वश्रूभिः राबृत्तो वधूनांञ्च समाजकः ॥
नीतः श्रुत्वान्य कक्ष्यायां रामागमन दुन्दुभिः ॥२५॥

उस समय सासुओं के समाज से घिरे हुए बधुओं के समाज ने दुन्दुभियों द्वारा स्वागत किए श्रीराम जी दूसरे आवरण में आगए हैं-ऐसा सुना ॥२५॥

मातृवे स्मान्तरेमार्गे मातृभिश्च नीराजितः ॥
दधन्तास्तमाशिषञ्च ततः कक्ष्यान्तरे भवत् ॥२६॥
स स्वयं जननी द्वारं सहस्रांशु शतप्रभम् ॥
समागत्याशु रत्नांशु चित्रितश्चमहीतलम् ॥२७॥

माता के महल के अन्दर जाने वाले मार्ग में माताओं द्वारा आरती हुई, उनके आशीर्वाद को

लेते हुए श्रीराम जी उस आवरण से भीतर गये। भीतरी आवरण में रत्नों से चित्र विचित्र चित्रित हुई भूमि पर हजारों सूर्यों के समान प्रकाश वाले माता के महल के द्वार पर श्रीराम जी शीघ्र आये ॥२७॥

अवतीर्य्य च निश्रेण्या गजतः सहचारिषु ॥
जनेषुक्षम्यतामेव मुच्चरत्सु रघूत्तमः ॥२८॥

हाथी पर से सीढ़ी द्वारा नीचे आंगन में उतर कर अपने सहचर सखा समाज में-आप लोग क्षमा करें, क्षमा करें-ऐसा कहते हुए श्रीरघूत्तम जो ॥२८॥

मत्तशार्दूल गत्यानु विराजद्भिः पदक्रमैः ॥
द्वार मुल्लंघ्य द्वारस्थो मातृ सखी नीराजितः ॥२९॥

प्रकाशमान सुन्दर पाँवड़ों से मतवाले सिंह की तरह गति से एक फाटक को उल्लंघन करके दूसरे फाटक पर खड़े हुए माताओं और सखियों द्वारा आरती हुई ॥२९॥

भ्रातृभिः सखीभिः श्रीमान्कौशल्यानन्दवर्द्धनः ॥
मुक्ता कुशुम माल्यानि वर्षत्सु प्रांगणं ययौ ॥३०॥

उसके बाद अपने भ्राता और सखाओं के सहित आंगन में आते हुए श्रीमान् कौशल्यानन्दवर्धन जी के ऊपर मुक्ताओं तथा फूलों की मालाओं की वर्षा हुई ॥३०॥

कज्जलाञ्चित दीर्घाक्षो दीर्घबाहु र्विभूषितः ॥
रुक्मचित्राञ्चितोष्णीषः कर्णावेष्टित कुण्डलः ॥३१॥

अञ्जन आंजे हुए बड़े २ नेत्र; सुन्दर स्वर्ण रत्न भूषणों से भूषित लम्बी भुजायें, चित्रित बस्त्र की पाग वाले, कानों में सुन्दर स्वर्ण रत्न निर्मित कुण्डल वाले ॥३१॥

काकुत्स्थ कुल दीपोसौ कामकान्तिः कुमारकः ॥
केलिदक्षः कलाभिज्ञः काकपक्षयावृताननः ॥३२॥

महाराज श्री ककुत्स्थ जी के कुल को प्रकाशित करने के लिए सुन्दर दीपक के समान करोड़ों कामदेवों के सदृश प्रकाश वाले राजकुमार केलि कलाओं में बड़े पण्डित सुन्दर काक पक्ष जुल्फों से शोभित मुखचन्द्र वाले ॥३२॥

खड्ग हस्त श्चर्म्मभृत्तु चासिपुत्रीपरीकरः ॥
भ्रातृभिः सहितोरामो मातृ सन्निधिमागमत् ॥३३॥

ढाल तलवार, कटारी को कसे हुए भ्राताओं के सहित श्रीराम जी माता जी के समीप आये ॥३३॥

जगृहु र्गुरु पत्न्यंघ्रि तत्र चानुक्रमेण च ॥
तया तेभ्रातरः सर्वे ह्याशीर्वाग्भिः प्रयोजिताः ॥३४॥

प्रथम गुरु पत्नी श्री अरुन्धती अम्बा के चरणों में प्रणाम किये इसी क्रम से पीछे से भाई व सखाओं ने भी प्रणाम किया। गुरुपत्नी ने भी सबको आशीर्वाद दिया ॥३४॥

ततोमातुः शभायां याः कुल बृद्धाः परिस्थिताः ॥
पादाभिवन्दनं तासां कृतं सर्वैश्चभ्रातृभिः ॥३५॥

उसके बाद माता जी की सभा में जो अन्य बृद्ध मातायें बैठी थीं उन सबको राम जी ने भी प्रणाम किया पीछे से सब भाई और सखाओं ने भी प्रणाम किया ॥३५॥

यथाक्रमं मातृशभां प्रणम्य ततः परम्मातृगणेनतास्ते ॥
ततो नमन्तस्तु निधाय चाङ्के स्फारं प्रमोदं प्रययुर्जनन्यः ॥३६॥

क्रमशः माता की सभा में सब अपनी माता गणों को भी प्रणाम किया। माताओं ने प्रणाम करते हुए श्री रघुनाथ जी को उठाकर अपनी गोद में बैठा लिया और महान आनन्द को प्राप्त हुईं ॥३६॥

परस्परं वीक्ष्य वदन्ति नो चे ज्जेष्ठस्तदामातर मब्रवीच ॥
इमे सकामा खलु पोठकेद्य कौतूहलं द्रष्टु मतो गमिष्ये ॥३७॥

सभी सखा लोग आपस में एक दूसरे को ताकते हुए बोलते नहीं है तब सबके बड़े भ्राता श्री रघुनाथ जी माता जी से बोले कि हे मां! ये सब भाई और सखा लोग आज पैठ के कौतुक को देखने के लिये लालायित होकर जारहे हैं ॥३७॥

तत्रैव साकं गुरुणा गजस्थो मातः पिता मे गमनं चकार ॥
तत्कुत्रचिल्लक्ष्मण एव श्रुत्वा समागतो मे सविधं सहर्पः ॥३८॥

हे माता! मेरे पिता जी भी श्रीगुरु महाराज के साथ हाथी पर बैठ करके उसी पैठ के कौतुक को देखने के लिए जारहे हैं इस समाचार को विधान पूर्वक कहीं से इस लक्ष्मण ने सुना है तो हर्षित होकर यह मेरे पास आया ॥३८॥

तेनाहमुक्तो भरतेनयुक्तो मातः समीहे किलपीठकेऽद्य ॥
त्वयासमं द्रष्टुमतीव शोभांदिगन्तकानां गजघोटकानाम् ॥३९॥

इसने ही मुझसे हम आपके साथ कौतुक देखने चलेंगे कहा है ये भरत जी भी उस समय मेरे पास ही में बैठे थे। हे माँ! मैं भी कैसा तो वह पीठ का कौतुक है? देखना चाहता हूं। चारों दिशाओं के अन्त तक बहुत दूर २ देश के बड़े २ हाथी घण्टाओं का नाद करते हुए पैठ में आये हुए हैं, अनन्त शोभा हो रही है ॥३९॥

श्रुत्वा तदाशील नतेक्षणेन मन्दस्मितेनातिविनीत मुक्तम् ॥
बाक्यं विनोदा कलितं चमातु र्हृदि प्रकामं सुखमाप माता। ४०॥

शील से नमी हुई दृष्टि वाले श्रीराम जी मन्द हँसते हुए बहुत नम्रता पूर्वक ऐसा कहा तो विनोद से भरे हुए इस बचन को सुनकर माता जी के हृदय में महान् सुख हुआ ॥४०॥

यथासुखं गच्छगजोन्नतेन येनासमन्ता त्परिपश्यतोति ॥
प्रस्थाप्य भ्रातृन्त्वपि स्नेह युक्तान्मातु र्वचः श्रुय सुखं समीयुः॥४१॥

माता जी बोली कि हे वत्स! जिन ऊचे हाथियों पर बैठ करके आप चारों तरफ देख सकते हैं उन पर बैठ कर आप अपने स्नेह रखने वाले इन सब भ्राताओं को भी बैठाकर सुखपूर्वक जाइये। इस प्रकार माता के बचन को सुनकर सभी कुमार बड़े सुखी हुये ॥४१॥

पत्न्या गुरोः पाद युगं पुनस्ते –
श्रीराम पूर्वाश्चप्रणम्य पश्चात् ॥
पूर्वं प्रणम्या स्तु प्रणम्य–
सर्वाः स्वमातु रंघ्रि जग्रहुश्च प्रीत्या ॥४२॥

उठ करके गुरु पत्नी जी के चरणों में प्रथम श्रीरामजी ने उसके पीछे सब भ्राता और सखाओं ने क्रमशः प्रणाम किया। पहले बैठने के समय जिन २ को जैसे प्रणाम किया था वैसे ही फिर प्रणाम कर के अन्त में माता जी चरणों में प्रेम से फिर प्रणाम किया ॥४२॥

प्रस्थाप्य स्वांके पुन रेव मात्रा–
कपोलके कज्जल विन्दुकश्च ॥
दत्तं तदादृष्टि निवारणाय–
मनोहराकार वतां सुतानाम् ॥४३॥

माता ने फिर भी उठा करके गोदी में बैठा लिया, इस मनोहर आकार वाले पुत्रों के दृष्टि दोष के निवारण के लिए गाल में काजल का बिन्दु लगा दिया ॥४३॥

गते समीपा द्भरताग्रजे तु गुणै र्मनोहारिणि मातरो स्य ॥
लावण्यसद्भाषित सुन्दरांगमेनं प्रशंशन्ति मुद श्च प्रापुः ॥४४॥

गुणों से मन को हरने वाले श्रीभरत जी के बड़े भाई के समीप से चले जाने पर सब मातायें इन श्रीरघुनाथ जी के बाल स्वभाव से बोले हुए सुन्दर बचनों तथा सुन्दर अङ्गों की प्रशंसा करते हुए आनन्द को प्राप्त हुई ॥४४॥

उच्चैरिभस्थोऽ रिप्रदर्प्यकै श्च सैन्यः समेतश्च सुभ्रातृभिश्च–
गच्छन्वभौ गौरव गृह्य माणं सपीठके कातुहला भिलाषी ॥४५॥

पैठ के कौतुक को देखने की अभिलाषा वाले अपने गौरव को छिपाते हुये सुन्दर भाइयों के साथ तथा शत्रु के दर्प को मिटाने वाले ऊचे हाथी पर बैठे हुए अपना सेना के सहित चलते हुए शोभित हो रहे है ॥४५॥

वामेपि दक्षे च खचिन्मणीनां–
सद्मावलीनान्तु गवाक्ष केभ्यः ॥
रथ्यासुरामं रमणीयवेषं निरीक्ष्य–
नार्य्यः प्रकिरन्ति मुक्ताः ॥४६॥

गलियों के रास्ते में दाहिने बायें मणियों से खचित बहुत ऊचे महलों की पंक्तियां हैं उनके छज्जा झरोखाओं में खड़ी हुई स्त्रियायें सखा और भ्राताओं के साथ सुन्दर शृङ्गार किये हुए श्रीराम जी को देख कर मुक्ता मणियों की वर्षा करती हैं ॥४६॥

सरोरुहाणां समृणाल कानां बिलक्षणानां तु ततो रकाशे ॥
विवीक्ष सूत्प्रेरित नेत्र शोभी गच्छन्वभौ राघव सुन्दराङ्गः ॥४७॥

सुन्दर नाल के सहित विलक्षण कमलों की पंक्ति आकाश में देखते हुए अपनी शोभा से सबके नेत्रों को आकर्षित करते हुए इस प्रकार अगल बगल के महलों में उन सब स्त्रियों के स्वागत को स्वीकार करते हुए सुन्दर अङ्ग वाले श्रीराम जी चलते हुए शोभित हो रहे हैं ॥४७॥

पद्माक्षीनां सुनयन निचयैः हृन्मताः कामकान्तिः–
स्नेह स्मासां स्वललित हृदये हावभाव प्रकाशे ॥
कुर्वन्कुर्व न्स्मृति मथ रघुराट् मोद सिन्धा वगाधे–
मज्जन्मज्ज न्विलुलित नयनः पीठमार्गे बभौ सः ॥४८॥

करोड़ों कामों के समान कान्ति वाले तथा हरण होगया है मन जिनका ऐसे इन रघुनाथ जी का हमारे से महान् स्नेह है इस प्रकार अपने हृदय में सुन्दर भावना करके हाव भावों का प्रकाश करती हुई उन सब स्त्रियों के कमल सदृश नेत्रों के समूह को स्मरण करते २ रघुश्रेष्ठ श्रीरामजी अगाध आनन्द समुद्र में गोता लगाते २ चंचल नेत्रों से पैठ के मार्ग में जाते हुए शोभित हो रहे हैं ॥४८॥

स्वनेतारं तारं कमल सुदृशो श्चाप्यति हितं–
मनस्येवं मत्वा त्वपि कुशल मस्त्वेव जगदुः ॥
अयोध्या वाशिन्यः सजल जलदाभां रसभरां–
दधाना स्तन्मूर्ति नयनयुगले चैव हृदये ॥४६॥

ये हमारे प्रेरक स्वामी हैं, अत्यन्त हितैषी भी हैं, इस प्रकार मनों में मानती हुई, कमल के सदृश सुन्दर नेत्र वाली अत्यन्त ऊचे स्वर से आपकी जय हो, कुशल हो. ऐसा श्रीराम जी को कहती हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण अयोध्यावासिनी स्त्रियायें सजल मेघ के समान श्याम सुन्दर की स्नेह रस से भरी हुई मूर्ति को अपने दोनों नेत्रों में तथा हृदय में धारण करती हैं ॥४६॥

द्वे पद्मे द्वे सुललित विलस न्मौक्तिके नापिशुक्ति–
विम्बद्वन्द्वं शुक सुख सविधं ज्याविहीनं धनुश्च॥
एत त्सर्वं शशिनि च विहितं सोपि पूर्णो विमाने–
पश्यंश्चित्रं रघुकुल तिलको याति तद्वीथिकायाम् ।५०

कोई सखी श्रीरघुनाथ के मुखचन्द्र का रूपक बांधकर अपनी सखी से कहती हैं कि हे सखी ! देखो दो कमल अपनी गोदियों में दो मुक्ताओं को रखकर सुन्दर ललित विलास कर रहे हैं तथा दो सूक्तिकायें, दो विम्ब, एक सुक तथा एक प्रत्यञ्चा से हीन धनुष सुन्दर सुख पूर्वक विलास कर रहे हैं। ये सबके सब चन्द्रमा के अन्दर सुन्दर विधान पूर्वक शोभित हैं। इस प्रकार के उस चन्द्रमा को देखने वाले दूसरे चन्द्रमा भी अपने विमानमें बैठे हुए पूर्ण होरहे हैं। इस प्रकारकी चित्र विचित्र रचनाओंको देखते हुए तथा बातों को सुनते हुए रघुकुल तिलक श्रीरामजी उन गलियों में जारहे हैं ॥५०॥

मनांस्येवं स्त्रीणां ललित सुकुमारो विजयितुं–
गजारूढो गच्छ त्यनुमित मिदं हे सखि मया ॥
असि हास्यं चास्य प्रणतभृकुटीयुग्मधनुषी–
विभृद्बाणौ चाक्षणी सजल जलदाभो रघुवरः ॥५१॥

कोई सखी अपनी सखी से कहती है कि हे सखी ! मैंने यह अनुमान किया है कि यह हाथी पर बैठकर चलने वाले ललित सुकुमार सजल जलद के समान श्याम रघुवर मुसुक्यान रूपी तलवार भृकुटी रूपी झुके हुए दो धनुष कटाक्षरूपी बाणोंको चढ़ाये हुये स्त्रियोंके मनको जीतने के लिये ही जारहे हैं।।५१।।

तरुण्यो हर्म्यस्था तरुण सुकुमारं रघुवरं–
समन्ता त्पश्यन्त्यः सरसमिति चिन्ता मभिययुः ।
निविश्यास्याप्यङ्के रहसि निशियामः सुखतरं–
सख्य स्माकंभाले किमुवद विधात्रा विरचितम् ।।५२।

तरुणी स्त्रियायें दोनों तरफ से छज्जाओं पर बैठी हुई तरुण सुकुमार अति सरस श्रीरघुवरजी को देखती हुईं एक दूसरे से कहती हुई कि हे सखी ! बताओ तो क्या ब्रह्माने हमारे भालमें, इन रघुनाथ जी के अंक में प्रवेश करके सुखपूर्वक एकान्त रात वितावेंगी ऐसा रचा है ? ।।५२।।

मधुर तर मनोज्ञयं मन्द हास्यं मनोमे–
नयन युग विशालं चञ्चलं श्चारुणञ्च ।।
व्यथयति सखिमार्गे गच्छतो हस्तिनास्य–
सजल जलद कान्ते राघवस्य प्रकाशम् ।।५३।।

हे सखि ! इन श्रीरघुनाथजी के अत्यन्त मधुर मन रमणीय मन्द हँसन कुछ अरुणिमा लिए हुए चंचल विशाल दो नेत्र सजल मेघ के समान श्याम वर्ण हाथी पर चढ़कर मार्ग में जाते हुए इन प्रियतम का रमणीय जो प्रकाश है उसने मेरे मन को अत्यन्त व्यथित कर दिया है ।।५३।।

विमाने प्रक्षिप्तः प्रवर मणिमुक्ता सुकलितो–
मया हारो हस्ते सकल गुण शीलो रघुवरः ।।
तमादाय ज्ञात्वा सरस मनुरागं हृदिधृतो–
मयाप्येषः शीघ्रं सखिसरस भावैर्हृदि धृतः ।।५४।।

हे सखी ! मैंने बिस कीमतीय मणि मुक्ताओं से बने हार को विमान में फेंका, सुन्दर शीलवान, सकल गुण निधान श्री रघुवर मेरे सरसानुराग को भानकर उस मालाको अपने हाथ से लेकर अपने गले में डालली, हे सखी ! मैंने भी इन प्रियतम जूको सरस भावोंसे शीघ्र अपने हृदयमें धारणकर लिया।।५४

सर्वासां बदन सरोज मञ्जु वृन्दे–,
नारीणां रघुबर एव षट्पदोसौ ।।
तासां स्यु नयन चया स्तथास्य चास्ये–
पद्माभेमधुलिह एव लुब्ध वृत्या ।।५५।

सब नारियों के दिव्य निर्मल मुख–कमल–वन में एक ये श्रीरघुनाथ जी ही भ्रमर बने हुए हैं और इन पद्मनाभ रघुनाथ जी के मुख कमल में उन सब स्त्रियों के नेत्र लोभी भ्रमर की वृत्तिसे मधु की चाहनासे लुभा रहे हैं।।५५।

रथ्यासु प्राप्ते रघुराज पुत्रे जातं मह त्कौतुक मेक मेव॥
एकाब्जकेनं न मधुव्रताश्च ह्यब्जे ष्वनन्तेषु मधुव्रतौ द्वौ॥५६॥

रघुराज कुमार श्रीराम जी के राजमार्ग में जाते हुए एक महान् अद्भुत कौतुक हुआ, एक ही मुख कमल वाले इन रघुनाथ जी में अनन्त स्त्रियों के नेत्र भ्रमर नहीं होने पाये हैं और अनन्त नारियों के मुख रूप कमलों के वन में इन रघुनाथ जी के दोनों नेत्र रूपी भवँरे पर्याप्त हुये ॥५६॥

मह्यां लस त्पूर्ण कलो मयङ्क स्तथैव खेचास्ति सरोज श्रेणी ॥
तद्दर्शने सा च विकाश माना तत्पश्यतां कौतुहलं जनानाम् ॥५७॥

तथा दूसरा कौतुक यह हुआ कि पूर्णकला वाला पूर्णमासी का चन्द्रमा तो पृथ्वी पर हाथी में बैठकर जारहे हैं उसी प्रकार आकाश में कमलों का बन इस चन्द्रमा के दर्शन के लिये खिला हुआ है। आम जनता के देखते हुये यह कौतुक हुआ ॥५७॥

कापिस्त्री करकमला सुदक्षा श्रीरामं-
शशि वदनं विशाल नेत्रं ॥
पश्यन्ती गज गत मुश्चतो गवाक्षा-
त्सापेच्चं वदति सखि बिभाव्य चैनम् ॥५८॥

हे सखी ! हाथों में कमलों को लिये कोई चतुर स्त्री हाथी पर बैठे हुये चन्द्रमा के सदृश मुख-तथा विशाल नेत्र वाले इन श्रीराम जी को लालायित होकर देखती हुई छज्जा पर इन राम जी को सुन्दर भाव मन में रख करके बोलती हैं ॥५८॥

कापिस्त्री प्रणयविलक्षणास्ति रामे-
नेदिष्टं शशिबदन स्तया सदृष्टः ॥
तच्छाया समगत मागता च तस्याः-
साश्लिष्या त्सुरत सुखं तथा च मेने ॥५९॥

कोई स्त्री अत्यन्त स्नेह प्रणय में भरी हुई श्रीरामजीमें धर्म कीढ़ता को देखकर आश्चर्य चकित हुई है। अत्यन्त समीप में श्रीरामजी के मुख चन्द्र को देखकर श्रीराम जी की छाया जहां पड़ती थी वहां आयी, श्रीरामजी की छाया को ही स्पर्श आश्लेषण से सुरत सुख को प्रत्यक्षकी तरह मानने लगी ॥५९॥

इत्थंराघव राजसूनुर मल श्नेहाम्बुदः सौख्यदः-
कान्तानां हृदये विलास मुदयन्प्राप्तो बहिर्गोपुरम् ॥
हित्वेभं वरवाहनं नवयुवा स्वारुह्य स्वश्वं नवं-
प्रावृत्य न्प्लुतय न्पुनश्च गतिभिः पीठंययौ नर्तयन्॥६०॥

इस प्रकार श्री चक्रवर्ति राजकुमार निर्मल स्नेह रूप जल की वर्षा करने के लिये मेघ के समान महान् सुखदायी समस्त कान्ताओं के हृदयों में विलास सुखको उदय करते हुये बाहरी फाटक पर आये। नवीन युवावस्था वाले अपने हाथी को त्याग करके श्रेष्ठ वाहन नवीन सुन्दर घोड़े पर सवार हुये उस घोड़े को घुमाते, उछालते सुन्दर गति से नृत्य कराते इस प्रकार चलकर पैठ में पहुंच गये ॥६०॥

हित्वा तं चान्य मारुह्य हयभूषाभिशोभनम् ॥
गोपुराणि समुल्लंघ्य संकक्ष्याण्येव सप्त च ॥६१॥

उस घोड़े को त्याग करके सुन्दर भूषणों से शोभित दूसरे घोड़े पर बैठ करके राजसभाके सातों आवरण फाटकों को उल्लंघन करके ॥६१॥

भ्रातृभिः सखिभिः सार्द्धं रामो राजीव लोचनः ॥
पितुः शभां समागम्य सद्गुरुं तं प्रणम्य च ॥६२॥

कमल नयन श्रीरामजी अपने सखा और भाइयों के साथ पिता की सभा में आ करके सद्गुरु श्रीवसिष्ठ जी को प्रणाम किया ॥६२॥

पितु राज्ञां समालब्धः पुनश्च पण्यवीथिकाम् ॥
दर्शितु आगतः श्रीमान् भ्रातृन्पीठ कुतूहलम् ॥६३॥

श्रीमान् पिता जी से आज्ञा को पाकर के अपने भाइयों का पैठ के कौतूहल दिखाने के लिये बाजार की गलीमें आये ॥६३॥

इति श्रीशङ्करकृते अमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषाया मुत्तराख्याने
श्रीरामपीठकागमनंनाम चतुश्चत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥४४॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां उत्तराख्याने श्रीराम पीठकागमनं नाम चतुश्चत्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४४॥

अथप्रथमतः श्रीमद्राघवो मोहनेक्षणः ॥
विवेश चाश्वकं पीठं बिशालं त्वेक योजनम् ॥१॥

मन मोहक कटाक्ष वाले श्रीमद्राघव जी पहले पैठ के घोड़ों वाले बाजार में गये जो एक योजन का विस्तार वाला है ॥१॥

श्रीरामागमनं ते च सौवैश्याः श्रुत्य हर्षिताः ॥
बाग्व्यवशायिनं मुख्य मग्रं कृत्वा च सन्मुखम् ॥२॥

श्रीरघुनाथ जी के आगमन को सुनकर बाजार के सभी सौदागर वैश्य हर्षित हुए, अपने मुख्य वाग्व्यवसायी (दलालों) को आगे करके श्रीरघुनाथ जी के सन्मुख आये ॥२॥

आगताः सम्मताः सर्वे भूषिताङ्गा महाधनाः ॥
गृहीतो पायन कराः काण्डपृष्टैः परिवृताः ॥३॥

जो सब बनियों प्रधान सम्मत् महाधनवान हैं वे सब लोग सुन्दर भूषिताङ्ग होकर हाथोंमें उपायन भेंठ ले करके अपने सिपाहियों से घिरे हुए आये ॥३॥

नाग यान समारुढे भ्रातृभिः परिवारितम् ॥
आत्मनामवदन्तश्च प्रणेमुस्ते च राघवम् ॥४॥

हाथी के रथ में बैठे भ्राताओं से घिरे हुए श्रीराम जी को उन सब वैश्यों ने अपना नाम बताते हुए प्रणाम किया ॥४॥

तेषु वाग्भिश्च रामेण कृतप्रणामाश्च वाणिजाः ॥
प्रतोषिताः यथायोग्यं प्रवीणेन च स्वागतैः ॥५॥

उन सब वनियों के वाणी द्वारा प्रणाम करने पर बड़े चतुर श्रीराम जी ने यथा योग्य स्वागत के द्वारा सबको सन्तुष्ट किया ॥५॥

अग्रे चोपरि रामस्य तेषां नत्यासमं यथा ॥
विस्तस्यच मुक्तानां च क्रमाद् वृष्टि र्बभूव च ॥६॥

उन वैश्यों ने जैसे प्रणाम किया तुरन्त श्रीराम जी के आगे तथा ऊपर सोनेकी हार और मुक्ता मणियों की हार क्रमशः वर्षा हुई ॥६॥

रूपमासेचनकं तद्राघवस्य विलोक्यते ॥
कुतः कस्मात्के वयंहि स्वागते विस्मृता स्मृतिः ॥७॥

हृदय को सिंचित करने वाले श्रीराम जी के रूप को देख करके तथा श्रीराम जी से स्वागत पा करके वे सब वनियादि हम कहां से आये ? कौन हैं ? कहां पर हैं ? इस स्मरण को भूल गये ॥७॥

पुनश्चानीय स्वास्थ्यं तैर्धैर्य्येण धनिनस्तदा ॥
अनुराग स्खलद्वाण्या रामं प्रत्यूचु राद्रितम् ॥८॥
वयंस्मो राम दूरस्थाइदं ते कान्त दर्शनं ॥
कुतोस्माकं धनाशानां लब्धं तत्कृपया हिते ॥९॥

फिर चित्त को शान्त करके धैर्य को धारण किये हुये वे धनिक लोग श्रीराम जी का आदर कर के अनुराग से गद्‌गद् हुई वाणी द्वारा यह बोले—"हे राम ! हम बहुत दूर देशके रहनेवाले हैं, हे अति कान्त ! आपका यह दर्शन हमको कहाँ कैसे मिल सकता था ? क्योंकि हम लोग तो धन की आशा में लटके हुए थे यह तो आपकी कृपा से दर्शन हुआ है ॥८-९॥

दुस्फलापि धनाशेयं फलिता चोत्तमं फलम् ॥
यस्या श्चाद्या नुषङ्गेन भवता दर्शनं कृतम् ॥१०॥

यद्यपि यह धन की आशा बहुत बुरा फल देने वाली है परन्तु हमारे लिये तो महान उत्तम फल देने वाली हुई जिसके प्रथम अनुसङ्गसे हमको आपका दर्शन हुआ ॥१०॥

देहि वाश मयोध्यायां सरज्वाश्चान पानकम् ॥
भवतां दर्शनं नित्यं किंकरिष्यामि स्वगृहे ॥११॥

अब हे महाराज ! हम लोगों को श्री अयोध्या जी में वास दीजिये जिससे सरजू जी में स्नान, जल पान, आपका नित्य दर्शन मिले, अब हम अपने घरों में जाकर क्या करेंगे ॥११॥

एवं संभाष्य तेसर्वे वहुभिर्मणिमाल्यकैः ॥
पूजयित्वा ययुर्हट्टं रामरूपे मनोर्पिताः ॥१२॥

उन सबने इस प्रकार बात करके मणियों की बहुत मालाओ को अर्पण किया, पूजा की, श्रीराम जी के रूप में मन को अर्पण करके अपनी २ दूकानों पर चले गये ॥१३॥

पश्य न्पश्यंश्च संघट्टा नेवं च तज्जना द्दतः ॥
पर्य्यट त्यनुजै र्राम उपनीत प्रदेशतः ॥१३॥

इस प्रकार श्रीराम जी उन बनियों से आद्रित होते हुए बाजार को देखते हुए अपने भ्राताओंके साथ प्रत्येक स्थानों में विचरने लगे ॥१३॥

वस्तुनो वणिजाः पीठे क्रीतस्यान्तन वाधनम् ॥
रामरूपाकर्षिताक्षा बिस्मृताः क्रयका इति ॥१४॥

प्रत्येक बस्तुओं के बाजार में श्रीराम जी के रूप से आकर्षित दृष्टि वाले बनिया लोग अपने बेचे हुए व खरीदे हुए समान का दाम लेन देन हुआ कि नहीं इस प्रकार विस्मृत हो गये ॥१४॥

हयस्थाश्चमहीस्थाश्च गजास्थाश्च रथ स्थिताः ॥
सर्वे चकोरी भूतास्ते रामं पश्यन्ति सन्मुखाः ॥१५॥

बाजार में चाहे घोड़े पर बैठे हों, चाहे हाथी पर बैठे हों, चाहे रथ पर या पृथ्वीमें ही खड़े हों जो जहां जैसे हैं वह चकोर को तरह से सन्मुख होकर के श्रीराम जी को देख रहे हैं ॥१५॥

यदर्थमागताः पीठं विस्मृत्वा तत्प्रयोजनम् ॥
पश्यन्तश्चानु धावन्ति चैके राम मुख प्रभाम् ॥१६॥

जिस काम के लिए बाजार में आये थे वह प्रयोजन भी भुला गया, केवल श्रीरामचन्द्र जी की मुख चन्द्र प्रभा को देखते हुए पीछे २ दौड़ रहे हैं ॥१६॥

न ददाति न गृह्णाति न वक्ति नच पश्यति ॥
रामे दृष्टयान्तरे जाते यो यत्र तत्र वै स्थितः ॥१७॥

कोई न तो कुछ देता है. न लेता है, न बोलता है, न देखता है, श्रीराम जी की दृष्टि से अलग हो जाने पर जो जहां जैसा था तैसे दिशा भ्रमित की तरह से खड़ा रहा ॥१७॥

रामरूपामृतं पीत्वा केचिन्मत्ता बभूविरे ।
हसन्नृत्यन्ति गायन्ति कोत्रा नत्रेति विस्मृताः ॥१८॥

कोई तो श्रीराम जी के रूपामृत को पीकर उन्मत्त होगये, कभी हँसते हैं, कभी नाचते हैं, कभी गाते हैं, कोई पास में है कि नहीं है इसको भूल गये ॥१८॥

अट्टाग्रभागे हट्टानां गवाक्षेषु शुभाननाः ॥
वामे दक्षे च वर्षन्ति रामं दृष्ट्वा मणिस्रजः ॥१९॥

बाजार में महलों के छज्जा अट्टालिकाओं पर सुन्दर मुख वाली दाये बाये से श्रीरामजी को देखकर मणि मालाओं की वर्षा करती हैं ॥१९॥

पीठेथ कौतुकं द्रष्टुं बधूनाञ्च मनोरथम् ॥
हृदि सम्भाव्य कौशल्या राममाता तिवत्सला ॥२०॥

इधर श्रीराम जी की माता श्रीकौशल्या जी अम्बा अपनी पतोहुओं (बन्धुओं) के ऊपर अत्यंत वात्सल्य रखने वाली पैठ के कौतुक को देखने की मन कामना को हृदय से अनुभव करके ॥२०॥

गजस्यन्दन मत्युच्च विशाल ञ्चातिभूषितम् ॥
तदा चारुह्य सचिवै महाशैन्य परिबृता ॥२१॥

अत्यन्त भूषित महान् विशाल ऊंचे हाथी के रथ में बैठकर अपने मन्त्री और सेनाओं से सुरक्षिता ॥२१॥

अनन्ताभिः सपत्नीभि रंथाश्वाभिश्च शोभिता ॥
मुर्छद्धिर्वाद्य ध्वानैश्च ययौ कौशल नन्दिनी ॥२२॥

अपनी सपत्नियों के अनन्त रथों से घिरे हुये शोभिता दिशाओं को मूर्छित करने वाली बाजाओं की आवाज से श्रीकौशलनन्दिनी बाजार (पैठ) को देखने को चलीं ॥२२॥

तच्छुत्वा पुरवाशिन्य उत्सहिरेच समन्ततः ॥
शिविकारथमास्थाय वीथ्यां वीथ्यां समास्थिताः ॥२३॥

इस समाचार को सुनकर समस्त नगर वासिनी बड़े उत्साह में भरी हुई चारों तरफ से शिविका और रथों में बैठ करके अम्बा जी (महारानी जी) के साथ चलकर पैठ देखने के लिए मार्ग की गली २ में खड़ी हैं ॥२३॥

कौशल्या प्रीति शौशील्य। ताभिः प्रीत्या सुमेलनम् ॥
वीथिं वीथिं प्रतिकृत्वा कृत्वा मार्गे मनस्तदा ॥२४॥

प्रेम और सुशीलता से भरी श्रीकौशल्या महारानी जी को उन समस्त नगर वासिनियों ने बड़े अनुराग पूर्वक गली २ में भेंट, पूजा, दर्शन किया। अपने मार्ग में मन लगाई हुई श्रीमहारानी जी ने उन समस्त नगर बासिनियों का उचित प्रत्युपकार सत्कार किया ॥२४॥

एवञ्च पीठं रथ्यायां राममाता महीश्वरी ॥
प्राप्ता महा समाजैश्च श्रुत्वा रामो मुदं ययौ ॥२५॥

इस प्रकार पैठ के मार्ग में महीश्वरी श्रीराम जी की माता अपने सपत्नी और बहुओं सहित समाज से पैठ देखने आगई हैं—यह सुनकर श्रीरामजी बड़े आनन्द को प्राप्त हुए ॥२५॥

रथं संस्थाप्य संस्थाप्य गजादीनान्तु पीठके ॥
तर्जन्या श्चानुभावेन पीठ कौतुक वैभवम् ॥२६॥

श्रीकौशल्या अम्बा जी बाजार में रथ को रोक २ करके अपनी तर्जनी अँगुलीसे सुन्दर अनुभाव पूर्वक बाजार के कौतुक बैभव को ॥२६॥

अदर्शय द्वधू श्रीमज्जानकीं गुणवत्तराम् ॥
सा दृष्ट्वापुनरप्रच्छ द्विस्तरेण च तद्वृतम् ॥२७॥

अपनी बहू महान् गुणों में श्रेष्ठ श्रीमती जानकी जी को दिखा रही हैं। श्रीजानकी जी भी देख देखकर के उस बाजार कौतुक के चरित्र को विस्तार पूर्वक पूछ रही हैं ॥२७॥

व्यवसायिनो पीठस्था धनिनी राममातरम् ॥
श्रुत्वागतां प्रधावन्ति गृही त्वोपायनङ्करे ॥२८॥

पैठ के वनियों की सेठानियां श्रीराम जी की माता आरही हैं ऐसा सुन करके अपने २ हाथों में उपायन भेंट लेकर दौड़ती हैं ॥२८॥

रामजाया समेताश्च प्रणम्य राम मातरम् ॥
आत्मानं धन्यमन्वान स्तुतिं कृत्वा पुनः पुनः ॥२९॥

श्रीराम पत्नी जी के सहित श्रीराममाता जी को प्रणाम करके अपनी आत्माको धन्य मानते हुए बार २ स्तुति करने लगी ॥२९॥

राजार्हाणि च वस्त्राणि मणिमाल्या न्युपायनम् ॥
निधाय राममात्राग्रे लब्धानुज्ञां प्रयान्ति ते ॥३०॥

राजाओं के योग्य मणि वस्त्र और मणि मालायें श्रीराम जी की माता के आगे भेंट रूप में रख करके उचित स्वागत पूर्वक महारानी जी से आज्ञा पाकर के अपने महलों में जाती हैं ॥३०॥

एवञ्चाखिल लोकार्च्या राममाता खिलेश्वरी ॥
पीठ पीठान्तरं सर्वं दर्शयित्वा बधूं तदा ॥३१॥

इस प्रकार सकल लोक पूज्या अखिलेश्वरी श्रीराम माता एक पैठ से दूसरे में जाकर सब दृश्यों (कौतुकों) को अपनी बधुओं को दिखाया ॥३१॥

आगताभागधेयाख्ये मन्दिरे ध्वज सूचके ॥
तत्रैवोच्च गवाक्षेच स्थित्वापश्यति कौतुकम् ॥३२॥

सब बाजार घूमने के बाद पैठ के मध्य में ऊची ध्वजा पताका कलशोंसे शोभित भागधेय नामक करादान महल में आयी उस करादान महल के ऊचे खण्ड के छज्जाओं में बैठकर बाजार का कौतुक देखने लगीं ॥३२॥

एवंदृष्ट्वा च पीठानि श्रीरामोपि सलक्ष्मणः ॥
आगत्यमातृ सान्निध्यं स्थित्वापश्यति कौतुकम् ॥३३॥

इसी प्रकार श्रीराम जी भी अपने भ्राता लक्ष्मणादि सब सखाओं के साथ पैठ के कौतुकों को देख करके उसी करादान महल में माता जी के समीप आकर कौतुक देखने लगे ॥३३॥

नटै आरोपितो दण्डो डमरूं नादयंस्तदा ॥
शिरसि प्रवह त्कुम्भं त्रयं हस्तेत्वसि द्वयम् ॥३४॥

उस करादान महल के आगे में एक नट रस्ते में एक बहुत बड़े लम्बे दण्डा को गाड़ करके बाजा बजाने लगा, धीरे २ अपने सिर पर उसने तीन घड़े रख लिये दोनों हाथोंमें दो तलवार ले ली ॥३४॥

मन्तीर वद्ध पादोऽ सौगायन्दण्ड महोच्चकम् ॥
भूमितः कुर्दयित्वातु तदारुह्य ननर्तच ॥३५॥

अपने दोनों पैरों को डोरी से बांध करके गान करते हुए वह बहुत ऊचे दण्ड पर पृथ्वी से कूद करके ऊपर चढ़कर दण्डे के सिर पर नृत्य करने लगा ॥३५॥

भार्य्या तस्यापि भूमौ च स्वयं गायति नर्तती ॥
पुनः सापि च संकुर्व न्नटस्य सविधंगता ॥३६॥

थोड़ी देर बाद उसकी पत्नी भ पृथ्वी में स्वयं नृत्य व गान करने लगी फिर वह भी कूदती हुई उसी विधान से नट के समीप गयी ॥३६॥

दण्डस्योपरि द्वावेव नृत्यन्तौ दर्शितौ जनैः ॥
शिष्या वाद्यन्ति वाद्यानि जनासंख्य समूहिताः । ३७।

दोनों जने उस दण्डा के ऊपर नृत्य करने लगे, सब जनता देखती है । वे दोनों नट और नटिनी बड़े प्रसन्न होकर नृत्य करने लगे तथा उनके शिष्यगण नीचे से खड़े होकर बहुत से बाजाओं को बजाते हैं, नृत्य करते हैं, गाते हैं। जनता की असंख्य भीड़ इकट्ठी होगयी इस दृश्य को देखने लगी ॥३७॥

एकन्तु रामरूपस्य द्वितीयं नट कौतुकम् ॥
यावन्त श्च महा पीठे जनाः श्रुत्वा समाययुः ॥३८॥

एक तो श्रीराम जी के अद्‌भुत रूप का दर्शन दूसरा वह नट का कौतुक—यह दोनों समाचार सुनकर पैठ में जितनी भी जनता थी सब देखने को आयी ॥३८॥

भार्य्या वतारिता वंशा त्सोवदं जनसं सदि ।।
भुज मुत्थाया स्यूच्चैश्च श्रूयतां जन संसदि । ३९॥

उस नट ने अपनी भार्य्या को उस बांस के दण्डे पर से नीचे उतरवा दिया और स्वयं उस बांसके ऊपरसे आम जनताकी भीड़में दोनों भुजाओंसे खंग ऊची उटा करके जनसमूह से कहने लगा॥३९॥

सद्भिः किमादृतं लोके कस्मिस्तेषां भवे त्स्थितिः ॥
इति द्वयं शभायान्तु पृच्छामि खलु सज्जनाम् ॥४०॥

हे भाइयों ! लोक में सज्जन लोग किसका आदर करते हैं और किसमें उनकी स्थिति होती है ? इन मेरे दो प्रश्नों का उत्तर दो यह मेरा प्रश्न आम जनता सबके लिए है ॥४०॥

एता दृशी शभाजाता मत्प्रश्नस्यापि नोत्तरम् ॥
दत्त केनापि ह्यार्य्येण मारिषोहि बदाम्यहम् ॥४१॥

थोड़ी देर में कहने लगा कि अहो ! आश्चर्य है इतने बड़े महान पुरुषों की भीड़ में मेरे एक भी प्रश्न का उत्तर किसी भी महान् पुरुष ने नहीं दिया, अच्छा हे पुरुषों ! अब मैं ही अपना उत्तर देता हूँ॥४१॥

सत्यमेवा दृतं सद्भिः सतां सत्ये स्थिति भंवेत् ॥
असत्या श्रयणा त्सर्व पाण्डित्यं हि पलायते ॥४२॥

सज्जन लोग सत्य का ही आदर करते हैं सत्य में ही सज्जनों की स्थिति भी होती है क्योंकि असत्य का आश्रयण करने से पण्डितों का सम्पूर्ण पाण्डित्य भाग जाता है यह निश्चय है ॥४२॥

अन्य त्प्रच्छामि लोकेभ्यो बदिष्यामि स्वयं नवा ॥
आत्मानं वोधयिष्यामि कि कस्यापि परीक्षया ॥४३॥

अब मैं सब महापुरुषोंके बीच में एक और प्रश्न करता हुँ उसका उत्तर मैं स्वयं नहीं दूंगा और मैं अपनी आत्मा को प्रबोधित कर रहा हूँ किसी को परीक्षा नहीं कर रहा हूँ ॥४३॥

कोवा महाशनो लोके कोवास्त्यनशन स्तथा ।
सन्तोषोऽनशनो वैस्या ल्लोभएव महाशनः ॥४४॥

अच्छा अब आप लोग बताइये कि लोकमें सबसे बड़ा भोजन करने वाला कौन है तथा अनसन करके रहने वाला कौन है ? थोड़ी देर बाद इन दोनों प्रश्नों का उत्तर नट ने स्वयं दिया । सन्तोष ही अनशन करके रहने वाला और लोभ ही महान् भोजन करने वाला है ॥४४॥

किमे कश्च द्वयं लोक ह्येकस्मिन्पश्च बिंशतिः ॥
ईश्वरैक श्चन्द्र सूर्य्यो देहेस्मिन्पश्च बिंशतिः ।४५॥

फिर नट ने प्रश्न किया कि लोक में एक कौन है, दो कौन है, एक साथ २५ कौन है । थोड़ी देर बाद इसका भो उत्तर नट ही ने उत्तर दिया—ईश्वर एक है चन्द्रमा सूर्य दो हैं इस शरीर के अन्दर २५ तत्व इकट्ठे हैं ॥४५॥

लोके लघुतरं किं स्यात् किं महत्तर मुच्यते ॥
भिक्षु लघुतरो लोके दाता खलु महत्तरः ॥४६॥

फिर नट ने प्रश्न किया—लोक में सबसे छोटापना क्या है, सबसे बड़ापना क्या कहा जाता है ? फिर इन प्रश्नों का उत्तर भी नट ने स्वयं दिया—भिक्षुक लोक में सबसे छोटा है, दाता बहुत बड़ा है ॥४६॥

कोवा त्यजति सर्वञ्च को वा गृह्णाति सर्वकम् ॥
सर्वंत्य जति वैराग्यंलोभो गृह्णाति सर्वकम् ।४७॥

फिर प्रश्न किया—कौन सबको त्यागता है और कौन सर्वग्राही है ? फिर नट ने स्वयं ही उत्तर दिया—वैराग्य सबको त्यागता है, लोभ सबको ग्रहण करता है ॥४७॥

कोवा प्यन्धोहि बधिरः कोवास्ति नेत्र श्रोत्रवान् ॥
धनवान्बधिरो त्यन्धश्चौरोस्ति नेत्र श्रोत्रवान् ॥४८॥

फिर नट ने प्रश्न किया—लोक में अन्धा और बहिरा कौन है तथा नेत्र और कान वाला कौन है ? फिर नट ने ही उत्तर दिया—लोक में धनवान बहिरे और अन्धे हैं, चोर नेत्र और कानवाला है॥४८॥

असिता च सिता काच सर्वे जानन्ति ते जनाः ॥
कीर्तिः सिताहि विख्याता त्वसिताऽकीर्ति रुच्यते ॥४९॥

फिर नट ने प्रश्न किया—लोक में समेद क्या बस्तु है और काला क्या है ! अब आप सब लोग जानते हैं मेरे प्रश्न का उत्तर दीजिये । थोड़ी देर में नट ने ही उत्तर दिया—लोक में कीर्ति ही सफेद है और अपकीर्ति ही काला है इस बात को सब जानते हैं ॥४९॥

कौ द्वौ तेजस्विनौ लोके तथा कौच धनुर्भृतौ ॥
रामार्को राम कामौ च तृतीयो नान्वित स्तयोः ।५०॥

फिर नट ने प्रश्न किया—लोक में दो तेजस्वी कौन हैं, धनुषधारी कौन हैं ? थोड़ी देर में दो नट ने ही उत्तर दिया श्रीराम जी और सूर्य भगवान दो तेजस्वी हैं। श्रीराम जी और कामदेव ये दो धनुषधारी हैं। इन दोनों के समान तीसरा कोई नहीं है ॥५०॥

एवमुक्त वतो रामे प्रशंसा पूर्वकां गिरम् ॥
ववर्षु रत्न माल्यानि नटस्योपरि तत्क्षणात् ॥५१॥

इस प्रकार श्रीराम जी की प्रशंसा पूर्वक वाणी कहने पर नट के ऊपर उसी समय रत्नों की मालाओं की वर्षा होने लगी ॥५१॥

मातैका च पिता कः स्या त्तद्ब्रूहि किम्वदाम्यहम् ।
कौशल्येकाहि माता स्या त्पिताकौशल पालकः॥५२॥

नट ने फिर प्रश्न किया—जगत में एक माता कौन है; एक पिता कौन है ? आप लोग कहिये। थोड़ी देर में नट ने कहा अच्छा मैं ही कहता हूँ—श्री कौसल्या जी एक माता हैं, श्री कौशल पाल ही एक पिता हैं॥५२॥

चन्द्रत्रयं मया दृष्टं कथ्यतां नु वदाम्यहम् ॥
खेचरैको भूचरौद्वौ श्रीरामस्य मुखं यशः ॥५३॥

थोड़ी देर में नट ने कहा अरे भाई ! बड़े आश्चर्य की बात कि मैंने तीन चन्द्रमा देखे हैं आप लोग बतायेंगे कि मैं ही बताऊँ ? थोड़ा देरमें बोला कि अच्छा मैं ही बताता हूँ—एक चन्द्रमा तो आकाश में चलते हैं, दो चन्द्रमा पृथ्वी पर—एक श्रीराम जी का मुख दूसरा—श्रीरामजी की कीर्ति यश है॥५३॥

इत्थं व्याहरत स्तस्य राम पित्रोः प्रशंशिनीं ।
गिरं गिरि रभूदग्रे नटस्य कलधौतकः ॥५४॥

इस प्रकार नट के कहने पर श्रीराम जी माता पिताओं की प्रशंसनीय वाणी को सुनकर नट के आगे सोने का पहाड़ लग गया ॥५४॥

वीरौ द्वौ जगति ख्यातौ तद्वद प्रवदाम्यहम् ॥
लक्ष्मणो वैच सत्रूघ्नो न लोकेत त्प्रति प्रभः ॥५५॥

फिर प्रश्न किया कि लोक में प्रसिद्ध दो वीर कौन हैं ? आप लोग बताइये नहीं तो मैं ही बताये देता हूँ। एक लक्ष्मण एक शत्रुघ्न ये ही दो लोक में असदृस वीर हैं ॥५५॥

पारं गन्तास्ति कोवात्र शस्त्रशास्त्रार्थ वारिधेः ॥
उच्यतां हि वदिष्यामि भरतोऽपर एवकः ॥५६॥

फिर नट ने प्रश्न किया कि लोक में शस्त्र और शास्त्र रूप समुद्र से सम्यक् प्रकार पार गया हुआ कौन है ? आप लोग कहिये अथवा मैं ही कहे देता हूँ—महान् विद्वान एक भरत जी से दूसरा कौन है ॥५६॥

नटे त्वेवं चोक्तवति श्रीरामे विचवारिधौ ॥
भ्रातृ सम्पादिनीं वाणीं महत्यूर्म्मि प्रवर्तिनी ॥५७॥

नट के इस प्रकार कहने पर श्रीराम जी रूप धन के समुद्र में भ्राताओं की प्रशंसा सम्पादिनी वाणी से महान लहर निकलने लगी ॥५७॥

इत्यन्तरे कुतः कस्मादाक्रम्य शतसोजनान् ।
नटाग्रे पतितो व्याघ्रो दीर्घकायो भयप्रदः ॥५८॥

इस प्रकार नट के कौतुक समाज के बीच अकस्मात कहीं से समाज की जनता को हटाते हुए नट के आगे एक बहुत बड़ा शरीर वाला बाघ आ पहुँचा और सबको भयभीत कर दिया ॥५८॥

तं हत्वा तस्य भार्य्यां च सर्वान्तस्य जनानपि ।
हाहेति शब्द सञ्जाते दुद्राव घोर शब्दयन् ॥५९॥

उस बाघ ने नट को तथा उसकी स्त्री तथा नट के सब परिवार को तुरन्त मार कर खा गया जनता हा ! हा ! चिल्लाती हुई घोर शब्द करके भागने लगी ॥५९।

जानन्तोपि च तन्मायां दृष्ट्वा भ्रम मुपाययुः ।
तत्रस्था श्च जनाः सर्वे साक्षात्सर्वंविलोक्य च ॥६०॥

यह नट की माया है ऐसा जानते हुए भी सबको भ्रम उत्पन्न हो गया। वहाँ पर ठहरी हुई सब जनता ने इस सब दृश्य को साक्षात् देखा ॥६०॥

इत्यन्तरे हि वाऽकस्मात् कामधेनु रूपागता ॥
चकार पयसां वृष्टि जिजीवुश्च समन्ततः ॥६१॥

इसी बीच में अकस्मात कहीं से कामधेनु गौ उसी जगह पर आगई उसने अपने थन (पयद) से चारों तरफ दूध की वर्षा करके सबको जिला दिया ॥६१॥

पुन नृत्यं कृतं तेन नाना कौतुक दर्शनैः ॥
चतस्रो घटिका रात्री व्यतीतान विदुः कश्चित्॥६२॥

फिर उस नट ने नाना प्रकार के बहुत से कौतुकों को दिखाया तथा नृत्य किया इस प्रकार चार घड़ी रात्रि बीत गयी किसी को कुछ भी मालुम न पड़ा ॥६२॥

पुनस्तं कौशलेन्द्रे ण स्वादृतं वहुशोधनैः ॥
विनिवृत्य नट्टं सर्वे वाणिजा दर्शनोत्सुकाः ॥६३॥

फिर महाराज श्री कोसलेन्द्र जी ने उस नट को बहुत सुन्दर आदर पूर्वक धन दिया। इस प्रकार नट को निवृत्त करके दर्शन की उत्सुकता वाले सब बनिया लोग ॥६३॥

धनिनो देश कालज्ञा विदेशियाः समन्ततः ॥
मिलितुं राजराजेन्द्रं समाजग्मु रूपायनैः ॥६४॥

जो कि दूर देश के रहने वाले देश, काल को समझने वाले बड़े २ धनिक लोग राज राजेन्द्र से मिलने के लिए हाथों में भेंट लेकर के चारों तरफ से आ पहुंचे ॥६४।

तेचादृताः पृच्छ्य नामानि कुशलादिभिः ॥
मुदितादश्च पुनर्जग्मुः राजागन्तुं प्रचक्रमे ॥६५।

महाराज ने उन सबके नाम और कुशल को पूछ २ करके सबको आदर दिया, वे सब प्रसन्न होकर के अपने २ स्थानों में चले गये। महाराज भी अपने घर आने की तैयारी किये ॥६५॥

कौसिल्या प्रीतिशौशिल्या राममाता महीश्वरी ॥
तस्यादर्शन कांक्षिण्यो वणिजानां स्त्रियो वराः ॥६६॥

सुन्दर शील और स्नेह वती राममाता महीश्वरी श्री कौशल्या जी के दर्शन की इच्छा वाली बनियों की उत्तम स्त्रियायें ॥६६॥

समाययुः मिलित्वाता देशभाषा स्वबोधकाः ॥
करान्तोपायनाः सर्वा मिलितुं दूर देशिकाः ॥६७॥

सब देशों की भाषा जानने वाली दुभाषिया लोगों के साथ मिलकर के हाथों में उपायन भेंट लेकर जो कि दूर देश को रहने वाली हैं, श्री महारानी जी के पास आयीं ॥६७॥

बहुशो रत्न माल्यानिधृत्वाचाग्रे ह्युपायनं ॥
संस्पृस्य चरणौ राज्ञा आदराप्ता समास्थिताः॥६८॥

बहुत सी रत्नों की माला उपायन भेंट रूप में महारानी जी के आगे रक्खी, महारानी जी के चरणों का स्पर्श किया और महारानी जी ने भी आदर दिया, अपनी २ उचित जगहों पर बैठ गयीं॥६८॥

अन्यथाच द्विभाषिण्या कृतं सम्भाषणं पुनः ॥
जानकी चांक मारोप्य वृद्धाभि र्लालितां हितत् ॥६९॥

अन्य दुभाषियों के द्वारा महारानी जी से बातें की और श्रीजानकी जी से बातें कीं और श्री जानकी जी को अङ्क से लगाकर अपनी गोदी में बैठाकर दूर देश की वृद्धायें प्रसन्न हुईं ॥६९॥

सानिध्यं राम मालोक्य कामिन्यः कामसुन्दरम् ॥
विकुर्वाणा निरीक्षन्ति लज्योत्कण्ठा समालयाः ॥७०॥

पास में ही खड़े काम से अधिक सुन्दर श्रीरामजी को देखकर लज्जा और उत्कण्ठा से भरी कामिनी स्त्रियायें समीप आती हुई देख रही हैं ॥७०॥

जग्मुः सर्वा मुदं प्राप्य कौशल्यांश्च प्रणम्यताः॥
निध्यायरामचन्द्रास्ये चित्तं चन्द्र चमत्कृते ॥७१॥

इसके बाद सबकी सब आनन्द मग्न हुईं श्रीकौसल्या अम्बा जी के चरणों में प्रणाम करके बड़े चमत्कार वाले श्रीरामचन्द्र जी के मुखचन्द्र में अपने चित्त को निवेशित करके चली गयी ॥७१॥

कौशल्याराम मादाय सशैन्यं भ्रातृभिः सह ॥
प्रदीपानां प्रकाशैश्च प्रविवेशपुरं तदा ॥७२॥

श्रीकौसल्या अम्बा जी भ्राताओं के सहित श्रीराम जी को लेकर के सेना से सुरक्षित, दीपों के सुन्दर इन्तजाम पूर्वक अपने नगर श्रीअयोध्या जी में आईं ॥७२॥

रथ्याया मट्ट मारुह्य पुरस्त्री बाल वृद्धकाः ॥
पश्यन्ति वाहिनी शोभां विन्यासानि चमत्कृताम्॥७३॥

रास्ते में नगर की बाल वृद्ध सब स्त्रियायें अपने महल की छत पर तथा छज्जाओं पर खड़ी हो कर बड़ी चमत्कार वाली फौज पलटन की शोभा देख रही हैं ॥७३॥

ध्वजतुर्य्य हयेभाग्रां नृत्यकौतुक संयुताम् ॥
प्रदीपानां पंक्तिभिश्च राजमार्ग प्रकासिताम् ॥७४॥

ध्वजा, पताका, तूरी आदिक बाजाओं का शोर, उत्तम घोड़े हाथियों का नृत्य तथा और भी बहुत से नृत्य कौतुक संयुक्त दीप वृक्षों की पंक्तियों से सुशोभित राजमार्ग प्रकाशमान हो रहा है ॥७४॥

निषादिभिः शादिभिश्च नग्न खड्ग करान्तकैः ॥
शक्ति वज्रातकै श्चैव खड्गोत्थपाद चारिभिः ॥७५॥

हाथियों तथा पीलवानों से, दण्ड लिए हुए सिपाहियों से, नंगी तलवार हाथों में लिए हुए तथा शक्ति, वज्र आदि नंगे औजारों को हाथों में लिये हुए तथा हाथ उठाकर चमकाते हुए ॥७५॥

स्वर्ण माणिक्य दण्डाद्यै रौप्यदण्डभृतैस्तथा ॥
उच्चरद्भिरुच्चकार जयसंशाब्दिकै र्जनैः ॥७६॥

मणि जड़ित स्वर्ण दण्डों को हाथों में लिये हुये तथा केवल स्वर्ण दण्डों को हाथों में लिए हुये इस प्रकार की फौजों से सुरक्षित ऊचे स्वर से जय जयकार शब्द बोलने वाले सूत मागध आदि लोगों के सहित ॥७६॥

छत्र चामर हस्तैश्चभूषितांगैश्च किंकरैः ॥
वीटिकादि सम्पुटान्त करैश्च परिवारितः ॥७७॥

तथा छत्र चँवर हाथों में लिये हुये सुन्दर भूषित अङ्ग वाले नौकर तथा पान के डिब्बाओं को हाथों में लिये हुये सेवकों से घिरे ॥७७॥

ताम्बूलं चर्वयन्मन्दं हसँन्स्त्रीणां मनोहरः ॥
भूषितेभरथारूढो बभौगच्छन्रघूत्तमः ॥७८॥

पान के बीड़ा को चबाते हुए, मन्द २ हँसते हुए, स्त्रियों के मन को चुराते हुए, सुन्दर भूषित हाथी के रथ में बैठे हुये इस प्रकार चलते हुये रघुश्रेष्ठ ॥७८॥

पार्श्वद्वयोश्च हर्म्याणां गवाक्षेपु समन्ततः ॥
स्वात्मन श्चोन्मुखा पात्रे काञ्चने स्थापिताः शुभे ॥७९॥

राजमार्ग के दोनों तरफ ऊचे महलों के छज्जाओं में बैठी स्त्रियों स्वर्ण थालों में आरती को सजाकर हाथों में लिए हुए रघुनाथ जी के सामने आने पर आरती करती हैं ॥७९॥

सुदृशां हस्त पद्मेषुभूषितेषु विराजिताः ॥
पश्यन्पंक्ति श्च दीपानां मगा दूर्वाञ्च पञ्चमम् ॥८०॥

इस प्रकार सुन्दर नेत्र वाली भूषित करकमलों में दीपों को ली हुई पंक्ति की पंक्ति सुशोभित हैं। उन सबको देखते हुये श्रीराम जी नगर के पाँच परकोटा तक भीतर चले आये ।।८०।।

तत्रैको वैश्यराजोस्ति वयश्योपि विशाम्पपेः ॥

पितुः शखाहि रामस्य सतांमान्यो धनाधिपः ॥८१॥

वहां पर महाराज श्री चक्रवर्ती जी के सखा एक वैश्यराज कहाते हैं जो कि श्रीराम जी के पिता के सखा सज्जनों (सन्तों) के मान्य बड़े धनवान हैं ॥-१॥

राजपुत्रस्य वाहिन्या तूर्य्याणां दिक्षु मूर्च्छितम् ॥

श्रुत्वा नादं परीक्षन्ते समानेतुं स्वमन्दिरे ॥८२॥

वे राजपुत्र श्रीराम जी की सेना का दिशाओं को मूर्छित करने वाले तूरी आदि बाजाओं की नाद सुनकर ये श्रीराम जी की ही सवारी हैं ऐसा निश्चय पाकर श्रीराम जी को अपने घर में लिवा लाने के लिये ॥८२॥

औरस्या द्पितेनैव श्रीरामं चाधिकम्मतम् ॥

स्वात्मजः प्रेषितोवुध्या गजमारुह्य सो गमतः ॥८३॥

अपने पुत्र से भी अधिक श्रीराम जी को मानने वाले उन वैश्यराज ने अपने पुत्र को भेजा वह वैश्यकुमार हाथी पर बैठ करके श्रीराम जी को लिवा लाने गये ॥८३॥

तम्मान्यभ्रातरं रामः श्रुत्वा सान्निध्य मागतम् ॥

मार्गं कर्तुम्मनुष्याणा मावृतौ प्रेरिता जनाः ॥८४॥

श्रीराम जी ने अपने मान्य भ्राता को मेरे पास आरहे हैं ऐसा सुना तो अपने को घेरी हुई फौज के लिये आज्ञा दी कि यह मेरे मान्य भ्राता के आने का रास्ता बनाओ॥८४॥

उक्तं प्रथमतस्तेन कौशल्यां मान्य मातरि ॥

आशीर्वादश्च संस्पृश्य श्रीरामेभाग्र मागतः ।८५॥

वह मान्य भ्राता प्रथम अपनी मान्य माता श्रीकौसल्या जी को प्रणाम किया और आशीर्वाद लिया उसके बाद श्रीराम जी के हाथी रथ के पास आया ॥८५॥

समयोचित मानस्य वाचिकं पितु रादतः ॥

प्रतिश्रुत्य च रामाय स्वीकारोक्तिः प्रलभ्य सः ।८६॥

बड़े आदर पूर्वक श्रीरामजी के लिए कही हुई श्रीपिताजी की बात को समयानुसार श्रीरामजीसे कहकर स्वीकृति को भी प्राप्त किया ॥-६।

लब्धानुज्ञस्तु श्रीरामा त्समातु र्मुदमाप्नुवान् ॥

गत्वा ग्रभग्र्यं शैन्यस्य कान्त मण्डल कोन्मुखम् ।८७॥

माता के सहित श्रीराम जी से आज्ञा प्राप्त होने पर बड़े आनन्द मग्न हुए वैश्यकुमार श्रीरामजी की सेना के आगे होकर अपने निवास स्थान कान्त मण्डलकी तरफ सेना मुख को घुमाया ॥८७॥

प्रवर्तितं तदानेनमुखं दुन्दुभि नादितम् ॥
विशालध्वज संशोधि प्रदीपाग्रप्रकाशितम् ॥८८॥

विशाल ध्वजा से सुशोभित, दीप वृक्षों से प्रकाशित, दुन्दुभी आदिक बाजाओं से सुघोषित इस प्रकार के सेनामुख को उस वैश्य कुमार ने अपने घर की तरफ घुमाया ॥८८॥

मार्गंस्वभवनान्तेन परार्द्धेन सुगन्धिना ॥
मित्रेण कौशलेन्द्रस्य साम्प्रतं गोपुरा वधिः ॥८९॥

अपने महल पर्यन्त मार्ग में विसकीमतीय सुगन्धों से तथा पुष्प पावड़ों के सजावटों से अपने महल के फाटक पर्यन्त कोसलेन्द्र महाराज के सखा ने स्वागत किया ॥८९॥

मण्डलस्य कान्त नाम्नः सिञ्चयित्वा सुपुष्पकैः ॥
स्वाच्छादितः सुभक्त्यातु रामागमन हेतवे ॥९०॥

वैश्यराज के निवास स्थान उस मण्डल का कान्त नाम है जिसके मार्ग पुष्पादिकों से सिंचित हैं श्रीराम जी के आने के लिये सुन्दर भक्ति पूर्वक सजा हुआ है ॥९०॥

वहुदीपावलीभिश्च चतुर्दिक्षु चकासितः ॥
मुक्तानां तोरणै रेवं संस्कृतोति मनोहरः ॥९१॥

दीपों की बहुत पंक्तियों से चारों तरफ प्रकाशमान है। मुक्ताओं के तोरणों से मनोहर सजा है ॥९१॥

सद्मखण्डान्तरं सर्वं वितान तोरणादिभिः ॥
दीपद्रुमैः काञ्चनैश्च शोभाभिः परिपूरितम् ॥९२॥

अपने महल के प्रथमावरण फाटक से कई खन्ड भीतर तक मार्ग वितान तोरणादि स्वर्ण के दीप वृक्षों से महान् शोभा परिपूर्ण है ॥९२॥

तावच्च प्रथमायां श्रीरामो भावात्त मानसः ॥
कक्षायां सद्मनस्तस्य समाजैश्च समागतम् ॥९३॥

तब तक भाव के वश मन वाले श्रीराम जी वैश्यराज के महल के प्रथमावरण में अपने समाज के सहित पहुंच गये ॥९३॥

पूर्वंधृत्वा स्थिताभिश्च कराब्जे भूषणाञ्चिते ।
नीराजन विधितत्र वनिताभि र्नीराजितः ॥९४॥

सुन्दर भूषणों से भूषित करकमलों में सजी हुई आरती की थाली को लेकर पहले ही से खड़ी हुई वनिताओं ने आरती किया ॥९४॥

सीमन्तिनीभिः श्रीरामः प्रतिकक्ष्यां नीराजितः ॥
धृत्वादि त्यांशुके पादावङ्गणश्च समाययौ ॥९५॥

प्रत्येक आवरणों में सुहागवती स्त्रियों के द्वारा श्रीरामजी की आरती हुई, दिव्य पांवड़ों पर चरण रखते हुए श्रीरामजी इस प्रकार आंगन में आये ॥९५॥

पुत्र भावाप्त हृदया श्रीरामेभावलि शुके ।।
तयानीराजित स्तत्र रामो राजीव लोचनः ।।९६।

श्रीराम जी में पुत्रभाव से स्नेह परिपूर्ण हृदय वाली भावलीशुका नाम की वैश्यराज पत्नी ने राजिव लोचन श्रीराम जी की अपने फाटक पर आरती की ।।९७।।

पुन र्गृहान्तरे नीत्वा माङ्गल्यार्थाञ्चिताग्रके ।।
दिव्याशने निवेश्याथ सीतया सहशोभनः ।।९७।।

उसके बाद पहले अपने घर के भीतर लायी जहां मङ्गल चिन्हों से चिन्हित मङ्गल साज सजे हुए वहां पर दिव्य आसन पर श्रीसीता जी के साथ श्रीराम जी को सुन्दर शोभा पूर्वक बैठाया ।।९७।

पूजयित्वा षोडशभि र्दम्पतीभ्यां नीराजितः ।।
भ्रातर श्च सखायश्च मातरश्चाहता यथा ।।९८।

षोडषोपचार विधि से दोनों दम्पत्ति ने पूजा करके आरती की तथा भ्राता और सखाओं का भी इसी प्रकार माताओं का भी यथोचित आदर किया ।।९८।।

प्रोत्थ वात्सल्य हृदयः किम्वादशरथो परः ।।
भार्य्यापि सुव्रतातस्य रामे वात्सल्य निर्भरा ।।९९।।

वात्सल्य भाव से भरे हृदय वाले वैश्यराज मानो महाराज दशरथ हीहों उनकी पतिव्रता भार्या भी श्रीराम जी में वात्सल्य भाव से भरी हैं ।।९९।।

पुन र्गृहान्तुरे न्येच सीतारामौ निवेश्य च ।।
उभाभ्यामङ्क मारोप्य लालितौ भोजनादिभिः ।।१००।।

उसके बाद सीतारामजी को एक अन्य महल में लेजाकरके दोनों पति पत्नी वैश्यराज ने अपनी गोदियों में बैठाया, लाड़ प्यार पूर्वक भोजन कराया ।।१००।।

परार्द्धभूषणै र्वस्त्रैः स्वयमेव स्वलंकृतौ ।।
तयोश्चभावमत्यन्तं कौशल्या वीक्ष्य विस्मिता ।।१०१।

बिसकीमतीय वस्त्र भूषणों को अपने हाथों से दोनोंको पहिनाया । इन दोनोंके वात्सल्य भावको देखकर श्री कौशल्या अम्बा जी चकित हो गयीं ।।१०१।।

आसीद्धर्षश्च सम्प्राप्य तौमेने स्वान्यविग्रहौ ।।
पुनर्भरत सत्रुघ्नौ लक्ष्मणश्च तथाविधः ।।१०२।।

वैश्यराज दोनों दम्पत्ति अपने को श्री महाराज दशरथ जी और कौशल्या जी के अन्य विग्रह मानकर के श्रीराम जी को बात्सल्य भाव से स्नेह करते हैं इस प्रकार की मान्यता से महान् हर्षित होते हैं, जिस तरह से श्रीराम जी को मानते हैं उसी तरह भरत, शत्रुघ्न, लक्ष्मण जी को भी मानकर लाड़प्यार करते हैं ।।१०२।।

सभार्य्या स्तेपि वात्सल्यै रनुभावै निरन्तरैः ॥
लालिताहि सभार्य्येण वस्त्रालङ्कार दानतः ॥१०३॥

जिस वात्सल्य भाव से श्रीसीताराम जी की सेवा की उसी तरह से भरत, शत्रुघ्न आदि को भी वस्त्रालंकार आदि सेवाओं से दुलार किया ॥१०३॥

सखायोपि च रामस्य यथायोग्यानुभावतः ॥
मित्रेण कौशलेन्द्रस्य तोषिताः सन्मतेनवै ॥१०४॥

तथा इसी प्रकार श्रीराम जी के सखाओं का भी यथायोग्य अनुभावों से सज्जनता पूर्वक श्री कोसलेन्द्र सरकार जी के मित्र ने संतुष्ट किया ॥१०४॥

श्रीराममातरः सर्वा वस्त्रालङ्कार भोजनैः ॥
मान्य मात्रा तु रामस्य तोषिता वहुस्वादरैः ॥१०५॥

इसी प्रकार श्रीराम जी की सब माताओं को भी वस्त्र, अलंकार, भोजन आदर मान से उचित स्वागत पूर्वक श्रीराम जी की मान्य माता ने सन्तुष्ट किया ॥१०५॥

इत्थं स्वादरतः प्रवर्द्ध धनिना श्रीराम पुत्रीकृता-
प्रेम्णा निर्भर मानसेन वहुशो रात्रीं गतां पश्यता ॥
उक्तं तथ्य यथा यथेति वचनं हेराम संश्रूयताम्-
यावच्च मदीय मस्ति सकलं त्वय्यर्पितं सर्वथा १०६॥

इस प्रकार श्रीराम जी को पुत्र भाव से मानने वाले महान् धनवान उस वैश्यराज ने प्रेम में मग्न मन होकर के सुन्दर आदर किया। बहुत रात बीत गयी है ऐसा देख करके वैश्यराज श्रीराम जी से ठीक २ निश्चित बात यह कही कि हे राम! सुनिये मेरा जो कुछ भी है और मैं जो भी हूँ यह सब मैं मेरा सम्यक प्रकार से आपके लिए अर्पण है ॥१०६॥

वृद्धंमां प्रतिपालय प्रतिदिनं मत्वा पितुः किङ्करम् ॥
दासीं मातुरिमां चभृत्य लघुकं पश्य त्वदग्रेस्थितम्॥
स्थापश्चात्रविधे हि वा स्वभवनं सस्वत्सुखं गम्यताम् ॥
किं नोयाति मुदं विलोक्य शशिनं दूरे स्थितेप्यम्वुधिः॥१०७॥

मैं बूढ़ा हो गया, आप मुझे अपने पिता का दास मानकर के प्रतिदिन मेरा प्रतिपालन कीजिये और इस मेरी पत्नी को आप अपनी माता की दासी मानिये और ये जो आपके सामने मेरा पुत्र है इसको अपना छोटा नौकर मान करके देखिये। अब आप चाहें इसी मकान में रात्रि में शयन कीजिये अथवा अपने दूसरे घर में जाइये, जिस तरह से आपको प्रसन्नता हो वही कीजिये। क्या समुद्र दूर रहने पर भी अपने पुत्र चन्द्रमा को देख करके प्रसन्न नहीं होता है? अर्थात् होता ही है ॥१०७॥

त्वात्मन्यात्मज भावकृत्सु मनसः श्रुत्या मनोज्ञं वच-
स्तत्स्वास्य न्निति शोभनं सुवचनं श्रीरामचन्द्रो ब्रवीत् ॥

त्वं साक्षा दशरथन्द नेन सदृशो माता 'तथेयं हिमे-
भ्राता यल्लघु लक्ष्मणेन सदृशो ह्यूनं कथं मन्यसे ॥१०८॥

श्रीराम जी सुन्दर मन से अपने में पुत्र भाव से भरे मन रमणीय वचनों को उनके सुनकर के वैश्यराज को आश्वासन देते हुए सुहावन बचन से बोले कि मैं आपको साक्षात् श्रीदशरथ जी के सदृश तथा ये मेरी माता जी के सदृश हैं तथा ये आपके पुत्र मेरे छोटे भाई लक्ष्मण जी के सदृश हैं। आप दोनों जने मनमें न्यूनता को क्यों मान रहे हैं ॥१०८॥

इत्थं वाग्भिरलंकृताभि रधिकं मान्येन मान्यौ सतां-
श्रीरामेण प्रणम्य श्लाघ्य पितरौ संश्लिष्यतं भ्रातरम् ॥
कण्ठात्स्वस्य निः साग्र्यमाल्य रुचिरं भ्रातु र्गलेस्थापितम् ॥
स्वाशी र्वाच मुपेत्यतत्रभवना द्गन्तुं मनः सन्दधे ॥१०९॥

इस प्रकार सुन्दर अलंकारों से भरी बातों को सर्व लोकमान्य श्रीरामजी ने सन्तों में मान्य उन दोनों पति पत्नी वैश्यराज को पिता की तरह से प्रशंसा और प्रणाम किया तथा पास में ही उनके कुमार को भ्राता की तरह आलिंगन किया उसके बाद अपने गले से एक सुन्दर माला निकाल करके मान्य भ्राता के गले में पहिना दी उसके बाद आशीर्वाद के बचनों को प्राप्त करके उस स्थान से अपने महल में जाने के लिए बिचार किया ॥१०९॥

यामितानगतारात्रि र्गच्छ वत्स यथा सुखम् ॥
अनुब्रजार्य्यं ज्येष्टं त्व मितिपुत्रस्च प्रेरितः ॥११०॥

हे वत्स ! अब थोड़ी सी रात्रि बाकी रह गयी है अब आप इन अपने ज्येष्ठ भ्राता को सुखपूर्वक पहुँचाने के लिए इनके पीछे जाओ ऐसा कहकर अपने पुत्र को भेजा ॥११०॥

चलत्स्वर्णाद्रि संकासं तदारुह्य बिमानकम् ॥
नरै र्वाह्यं सहस्रैश्चमान्य भ्रातापि संयुतः ॥१११॥

हजारों मनुष्यों द्वारा ढोया हुआ चलता हुआ स्वर्ण पर्वत के सदृश उस विमान में अपने मान्य भ्राता के सहित श्रीरामजी चढ़े ॥१११॥

एवम्पुत्र बधूभिश्च कौशल्या तत्समादृता ॥
परस्परं समादृत्य ह्याजगामततो गृहात् ॥११२॥

इसी प्रकार पुत्र पतोहुओं के साथ श्री कौशल्या जी ने भी परस्पर सम्यक प्रकार आदर ले दे करके फिर उस घर से अपने घर के लिये चल दीं ॥११२॥

पुरस्त्री पुरुषाणाञ्च नेत्रोत्साह चिकीर्षया ॥
प्रतिहर्म्यं बधूभिश्च परिबर्तिनीराजनम् ॥११३॥

पुर की स्त्री पुरुषों के नेत्र उत्साह प्राप्ति की इच्छा से नगर बधुओं प्रत्येक अपने महल के छज्जा में आरती हाथ में लेकर खड़ी हैं ॥११३॥

रथ्यास्व नु भवन्नामो राजीवायत लोचनः ॥

परिवृत्य विमानस्थः सर्वन्तु कान्त मण्डलम् ॥११४।

सुन्दर सखादिक समाज से घिरे हुए राजिव लोचन श्रीरामजी विमानमें बैठकर गलियोंमें उन सबकी आरतियों का अनुभव कर रहे हैं ॥१४॥

स्वग्रे वार वधूभिश्च कृतं गानं मनोहरम् ॥

विमाने नर्त्तिताभिश्च हावभावाङ्ग दर्शनैः ॥११५॥

आगे २ वैश्याओं का मनोहर गान तथा हाव भाव अङ्ग दर्शनों से विमान में नृत्य हो रहा है ॥१५॥

शृण्वन् शृण्वन् गुणज्ञोसौ सखीभि र्भ्रातृभिः समम् ॥

शनैः शनैः राजगाम महोच्चं पितृ मन्दिरम् ॥११६॥

अपने सखा और भाताओं के साथ बड़े गुणज्ञ श्रीराम जी उस नृत्य गान को सुनते देखते धीरे २ बहुत ऊँचे अपने पिताजी के मन्दिर में आ पहुंचे ॥११६॥

क्षम्यतां क्षम्यता मेव मुच्चरत्सु जनेषु च ॥

विमाना दवतीर्य्या थ विवेश भवनान्तरम् ॥११७॥

विमान से नीचे उतर कर जनता को भीड़ में आप लोग क्षमा करें, क्षमा करें—ऐसा कह करके रास्ता पाये महल के अन्दर प्रवेश किये ॥११७॥

इति श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां सुत्तराख्याने पीठकागमनं समाज वर्णनोनाम पञ्च चत्वारिंशत्तमः सर्गः ।४५॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां उत्तराख्याने पीठकागमन समाज वर्णनो नाम पंच चत्वारिशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४५॥

कक्षान्सर्वान्तथा क्रम्य सखिभ्रातृभिरावृतः ॥

खचि द्रत्नाङ्गणं प्राप्य तत्र स्थं पितरं पुनः ॥१॥

सखा भ्राताओं से घिरे हुए पिता के भवन के सब आवरणों का अतिक्रमण करके भीतर रत्न खचित आंगन में बैठे हुये पिताजी को प्राप्त करके ॥१॥

प्रणम्य भ्रातृभिर्युक्तः सान्निध्य आदितः स्थितः ॥

तदा विलम्ब मापृच्छ न्पिता हर्षसमन्वितः ॥२॥

भ्राताओं के सहित प्रणाम किया तथा पिताजी से आद्रित होकर बैठे, बड़े हर्षसे भरे हुए पिता जी ने विलम्ब होनेका कारण पूछा ॥२॥

शीलानते क्षणेनाथ तन्मित्र कृतसतादरम् ॥

वर्णितं विधिना सम्य ग्विलम्बस्य हिकारणम् ॥३॥

बड़े सुशील श्रीराम जी ने नम्र दृष्टि से उन पिताजी के मित्र द्वारा किये स्वागत सत्कार के हेतु विलम्ब होने के कारणको विधि पूर्वक सब वर्णन किया ॥३॥

साकं रामेण राजापि मित्र पुत्रं विलोक्य च ॥
तदाद्रितो यथाकारं राम मात्रापि चाद्रितः ॥४॥

महाराज ने भी श्रीरामजी के साथ मित्र के पुत्र को देखकर उसका यथा योग्य आदर किया तथा श्रीराम माता ने भी उसका आदर किया ॥४॥

बहु रात्रीं गतां वीक्ष्यामात्य पुत्रान्यसज्जनैः ॥
अन्यै राम सखीभिश्च साकं स प्रेषितो गृहम् ॥५॥

रात्रि बहुत बीत गई ऐसा देखकर मन्त्री युक्त तथा अन्य सज्जनों और श्रीरामजी के सखाओं द्वारा उस वैश्य कुमार को उसके घर भेजा ॥५॥

आहूय सादरान्माता रामं भ्रातृ समन्वितम् ॥
भोजनाय तदा पृच्छन्नाम्ना ललितकेनच ॥६॥

तत्पश्चात् भ्राताओं के सहित श्रीरामजीको माता जी ने आदर पूर्वक बुलाया उस समय ललितक नाम के रसोइया ने भोजन के लिए पूछा ॥६॥

मिष्ट मिष्ट ममिष्टम्वा युक्त सैन्धव सौंधकम ॥
मधुरं चातिमिष्टम्वा भुंक्ष्वतात यदीच्छसि ॥७॥

हे तात ! चाहे मीठा ही मीठा अथवा विना मीठेका (दूध मलाई आदि पदार्थ) अथवा नमकीन आदि मधुर वस्तु मधुर वस्तु जो भी आपकी इच्छा हो भोजन कीजिये ॥७॥

श्रुत्वामातु र्वचो रामो वात्सल्यरस स्पन्दितम् ॥
उवाच मातरं मौग्ध्यै र्वचनं प्रीति वर्द्धकम् ॥८॥

माता के वात्सल्य रस से भरे बचन को सुनकर बड़ी मुग्धता पूर्वक श्रीरामजी माता को प्रेम वर्द्धक बचन बोले ॥८॥

वारम्वारं हठान्मान मुपास्थायानुरागतः ॥
प्राशितो मान्य मात्राह तुष्टो नेच्छामि भोजनम् ॥९॥

हे माता ! मान्य माताने मेरेको अपनी गोदीमें बैठाकर बड़े अनुरागसे वार२ हठ करके भोजन कराया है इसलिए मैं सन्तुष्ट हूँ भोजनकी इच्छा नहीं है ॥९॥

एवम्वदति श्रीरामे मात्रा वीक्ष्यालसम्मुखे ॥
वधूश्च शिविकां स्थाप्यभवनाय नियोगितः ॥१०॥

इस प्रकार श्रीराम जी के कहने पर माता ने मुख में आलस्य को देखा। वधुओं को शिविका में बैठा करके श्रीकनकभवनमें भेजा ॥१०॥

प्रणम्य पितरारामो मातृन्सर्वा स्तथापराः ॥
भ्रातृभिश्चा नुव्रजितः सुखजानं समाश्रितः ॥११॥

श्रीराम जी भी माता पिता तथा और सब पूज्य वर्गों को प्रणाम करके भ्रातादि सबके सहित सुखयानमें बैठकर ॥११॥

छत्र चामर हस्तैश्च सेव्यमानोपि सेवकैः ॥
राजपुत्रै रनन्तैश्च शोभतेपरिवारितः ॥१२॥

छत्र, चँवर धारी आदि सेवकों से सेवित होकर अनन्त राजकुमारों से चारों तरफ शोभित॥१२॥

नग्न खड्ग धरैर्भृत्तौः शक्तिकैः परिगामिभिः ॥
स्वर्णदण्डधृतैश्चापि शोभते पूर्व गामिभिः ॥१३॥

नंगी तलवार लिए सेवकों से तथा शक्ति लिये, स्वर्ण दण्ड लिये अगल बगल आगे पीछे सेवकों से सुरक्षित ॥१३॥

गायकैः सोरठं रागं सुषिरे मधुरस्वरैः ॥
शृण्वन् शृण्वन्नाजगाम भवनं कनकाह्वयम् ॥१४॥

तथा गाने वालों द्वारा सुषिर (वंशी) आदि बाजाओं के ताल पूर्वक मधुर स्वर से सोरठ राग सुनते २ कनकभवन के दरवाजे तक आ पहुँचे ॥१४॥

यामेकक्षणमम्बुजायतदृशीं प्राणप्रिया मङ्कतो ॥
भिन्नां कर्तु मपि क्षमो न विदितः श्नेहाम्बुधी राघवः ॥
तस्या मुत्सुक इत्यलं सपदितान् बन्धू न्सुहृत्सङ्गता ॥
न्विसृ ज्याथ विवेश सौविद गणैः संरक्षितं द्वारकम् ॥१५॥

जिन कमल सदृश विशाल नेत्री प्राण प्रिया को एक क्षण के लिए भी गोदी से अलग करना नहीं सहन कर सकते हैं इस प्रकार प्रसिद्ध स्नेह के समुद्र श्रीराम जी अपनी प्रिया के लिए उत्सुक हुये साथ के भाई और सुहृद जनों को शीघ्र विसर्जन करके द्वार रक्षक गणों से सुरक्षित फाटक के अन्दर प्रवेश कर गये ॥१५॥

अथानु व्रजितं सर्वा भगिन्यश्चापि मैथिली ॥
प्रासाद द्वार पर्यन्त मागता स्ता निवर्त्य च ॥१६॥

सखाओं के विदा होने पर इधर श्रीमैथिली जी भी अपनी सब बहिनियों के साथ कनकभवन के फाटक तक आयीं उसके बाद सब बहिनियों को विदा किया ॥१६॥

वयस्यानां गणैः पार्श्वे छत्रचामर धारिभिः ॥
सेव्यमाना भ्यन्तरायां कक्षायाञ्च समाययौ ॥१७॥

अपनी समानावस्था वाली सखियों ने अगल बगल छत्र चँवरादिक धारण करने वालियों से सेविता श्रीकनकभवन के भीतरी आवरण में आयीं ॥१७॥

दृग्भ्यां राघव सुन्दरेण प्रथमं प्राणप्रिया लिंगिता ॥
बाहुभ्यां तदनु प्रकाम सुखदा मालिंग्य तोषं ययौ ॥
अन्याश्चा प्युपलेभिरे ऽभिलषितं रामान्मनोहारिणः ॥
सीतापादरजः प्रसाद फलितं रामस्यकान्ताः स्वकम् ॥१८॥

श्रीराघव सुन्दर जी से दृष्टि मेल हुआ, प्रीतम ने अपनी दोनों भुजाओंसे सुख पूर्वक प्राणप्रिया को आलिंगन करके मनमाना सुख पाकर सन्तुष्ट हुए। अन्य सब रामकान्ता सखियों की भी श्रीसीताजी के चरणरज प्रसादसे फलित अभिलाषायें मन को हरने वाले प्रीतम रामजी से पूर्ण हुईं ॥१८॥

दर्शन स्पर्शनाभ्याञ्च मैथिली रघुनन्दनौ ॥
परस्परं मुदं प्राप्य भुजालम्बि परस्परौ ॥१६॥

परस्पर भुजाओं से आलम्बित (गलबाहीं दिये हुए)श्रीमैथिली रघुनन्दन जू दर्शन स्पर्श द्वारा परस्पर आनन्द को प्राप्त हुये ॥१६॥

ततोभ्यन्तर कक्ष्याया मायर्यौ वनितागणैः ॥
सिंहाशने समास्थाय कृत्वा सम्भाषणं क्वचित् ॥२०॥

उसके बाद अपनी बनितागणों के साथ दोनों जने कनकभवन के भीतर आगे आवरण में सिंहासन पर बैठ करके परस्पर कुछ बात चीत की ॥२०॥

प्रचक्रमेऽष्टापदाख्यां क्रीडां सार्द्धं सखीगणैः ॥
स्पर्द्धा प्रवर्द्धकां लाभे कश्चिज्जय पराजये ॥२१॥

बाद को सखिगणों के साथ अष्टापद (चौपड़) नामक खेल को आरम्भ किया। परस्पर जय पराजय की स्पर्धा से प्रतिद्वन्द को प्राप्त हुये ॥२१॥

सारी विहारेतु परस्परञ्च जया जयौ प्राप्य प्रियाप्रियौस्तः ॥
सख्य ब्रवीच्चाति गताश्चरात्रि विलोक्य स्वापाय विहस्य वाक्यं २२।

पाशा के खेल में परस्पर जय पराजय को आशा से दोनों प्रिया प्रिय उमग रहे थे, सखियों ने इस द्वन्द को देख कर शयन के लिये हँसकर रात बहुत बीत गई है ऐसा शब्द कहा ॥२२॥

दीपायनाना मचलि प्रकाश मिभ्या यथा मत्त गजोऽम्बुराशिम् ॥
विवेश रामो मिथिलेन्द्र पुत्र्यारते गृहं स्मृद्धि समग्रभाषम् ॥२३॥

मणि दीपावलियों के अचल प्रकाश में हथिनियों के साथ मत्त हाथी जिस प्रकार जलाशय में प्रवेश करता है उसी प्रकार महान् ऐश्वर्य से प्रकाशमान अपने विलास महल के अन्दर श्रीमैथिलीजी के साथ श्रीराम जी प्रवेश किये ॥२३॥

पर्य्यंक मास्थाय तदा सुदम्पती सितोपलौषध्यभि संस्कृतं पयः ॥
पीत्वा समाचम्य मनोज्ञ वीटिकाम् समादतुः सौरभसञ्चिताम्मुदा।२४

भीतर पर्यङ्क पर दोनों सरकार विराजे, सखियों ने मिश्री आदि औषधियों से संस्कृत दूध पिलाया, आचमन कराया, आनन्द मग्न हुई सखियों ने सुगन्धित मनरमणीय बना हुआ पान का बीरा दोनों सरकारों को दिया ॥२४॥

परस्परं भाव मनन्त मुत्सवं निशेवयन्तौ नितरां परस्परौ ॥
अज्ञातिका स्तौ शुभगा सिषेविरे ताबूल बारि व्यजनैःसमन्ततः।२५॥

दोनों सरकार परस्पर अनन्त भावों के उत्सवों को निवेशित कराने करने लगे, उस एकान्तिकी स्थान में अत्यन्त परस्पर आसक्त हुए दोनों सरकार को पान, जल पंखा आदि से कोई अज्ञात सखी सुभगा (बड़ी बड़भागिनी) सब तरह से सेवा करने लगी ॥२५॥

स्वरै रतारै धृतहस्त वीणया कृतः स्वलापो मधुरः प्रवीणया ॥
निशीथकार्हं प्रतिराग वर्द्धनः सख्या कयाचिद्धृदि तत्सुखाप्तया २६

उन जुगल सरकार को सुख बढ़े ऐसी हृदय में चाहने वाली कोई चतुरी सखी वीणा को हाथ में लेकर चण २ रागों को बढ़ाने वाला रात्रि में शयन के योग्य बिना तार का मधुर स्वर से सुन्दर राग अलाप किया ॥२६॥

शिव उवाच—बाला समस्ता म्परिश्रूय वार्त्तां सा योगमुद्रां प्रतिदीर्घकालम् ॥
योगाय योगेश गतेः स्वनेतु र्योगंसमारभ्य पितु समीहे ॥२७॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि वह बालिका राजकन्या सुकान्ति नामकी सम्पूर्ण बातों को योगमुद्रा से सुनकर के बड़े २ योगेशों के गति स्वरूप अपने प्रेरक प्रियतम के दीर्घकालिक संयोग को बिचार करके प्रियतम की प्राप्ति के लिए अपने पिता के अधीन है ऐसा निश्चय किया, समाधि द्वारा योग की प्राप्ति के लिये स्तुति की ॥२७॥

इति श्रीशङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां मुत्तराख्याने राजकन्या म्प्रति योगमुद्रा कथनप्रसंगे श्रीअयोध्यायाः वहिप्रदेश वर्णनोनाम षड्चत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥४६॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां उत्तराख्याने राजकन्यां प्रति योगमुद्रा कथन प्रसंगे श्रीअयोध्यायाः वहि र्प्रदेश वर्णनं नाम षडचत्वारिंशत्तमः सर्ग. समाप्तः॥४६॥

राजकन्योवाच—हेकान्त कान्त गुण रूप स्वरूप शील—
लावण्य लोक बल वारिधि वाग्दिनेश ॥
त्वय्येक तान मति मुद्वह मां कृपालो —
देहंत यजामि नभजामि बरं त्वदन्यम् ॥१॥

श्रीसुकान्ति जी स्तुति करती हैं—हे कान्त ! आप रमणीय गुण, रूप, स्वरूप, शीलवान हैं तथा सुन्दर सुन्दर सुकुमार हैं और बल में तो सर्वलोक को बल देने वाले बल के समुद्र हैं। आपकी वाणी सूर्य के समान प्रकाश करती है। हे कृपालो! मेरी बुद्धि एक रस आप में लगी है आप मेरे को विवाह कर स्वीकार कर लीजिये नहीं तो मैं शरीर को त्याग दूंगी आपसे अतिरिक्त दूसरे पति की सेवा में नही करूंगी ॥१॥

नेता सुखस्य दुःखभिद्भजतामिति त्वां गायन्तिसर्व श्रुतयः स्वमति प्रयुक्ताः॥
भावानुगं त्वमपिते च श्रुति प्रणीतं तत्संस्मरामि सततं स्वसुखायनाथ ॥२॥

दुख से संतप्त हुए जीव जो आपका भजन करते हैं उनको आप ही सुखों को देते हैं ऐसा सभी वेद की श्रुतियाँ तथा आप में बुद्धि लगाये हुये महात्मा लोग गान करते हैं और आप भाव के वश में हैं

यह भी उन महात्मा और श्रुतियों से निश्चित है इसलिए हे नाथ ! मैं अपने सहज स्वरूप के अनुसार आपके सुख के लिये हूँ ऐसा हमेशा अपने को स्मरण करती हूँ ॥२॥

सालोक सद्गति रिहा प्यति दुर्ल्लभाते त्वद्भक्तिहीन मनसा मजितात्मनाम्वै ॥
स्यान्मे नतुष्टि रनये तिविचित्रभावे तद्राग रञ्जितमति स्त्वमसि प्रवीणः ॥३॥

इस लोक में आपकी भक्ति से हीन मन वाले विषयाशक्त जीवों के लिये अन्याय पूर्वक आपकी सालोक्य गति भी अत्यन्त दुर्ल्लभ है। सो यह आपके विचित्र भाव वाली सालोक्य गति प्राप्त होने पर भी मुझे आपके दर्शन के विना सन्तोष नही देती ॥३॥

नीतास्मि नाथ करुणानिधिना त्वयाहं-
लोकं त्वदंघ्रि परिशीलन तत्पराणाम् ।
अत्राप्रयोग मपिहन्तु मुदार शील -
त्वंस्या त्क्षमो हि किल प्रेषित योग मुद्रः॥४॥

हे नाथ ! आपके चरण कमलों की सेवा में सावधान हुए भक्तों के लोक में आप ही करुणा करके मुझे लाये हैं। इस आपकी दयालुता के अन्दर मेरा इस प्रकार कहना अनुचित भी है तो भी आप इस अनुचित को दूर करने के लिए कुशल हैं क्योंकि हे उदारशील ! आप ही ने तो योगमुद्रा को भेजा था॥४॥

सामान्यतः सर्वजगतपति स्त्वं विशेषतोऽनन्यगते र्ममास्तु ।
स्वसौभागाया स्मर किंकरीं मां सौशील्य वात्सल्य गुणाधिकायाः ॥५॥

आप सामान्य रूप से तो समस्त जगत के पति हैं विशेष करके आप अनन्य गति जो मैं हूँ मेरे पति हैं। आप मुझे अपनी सौभाग्यवती सुन्दर सौशील्य वात्सल्य आदि गुणों में अत्यन्त चढ़ी बढ़ी अपनी प्रिया की दासी रूप में स्मरण कीजिये ॥५॥

विद्या विद्याभिधेते किल सुख मसुखंदायिके जन्ममृत्यो-
र्नोवैमुश्चन्ति ताभ्यां विरहित कृपकाः कान्तते नन्त यत्नैः ॥
सेयंनस्या ददश्रा मयिननु कथने त्वत्कृषा लच्चितायां -
दोपापत्ति स्तदा स्या त्कृत विदि सुगुणे नाथत्व त्प्राप्तिरोधः ॥६॥

हे कान्त ! आपकी विद्या और अविद्या नाम की सुख और दुख को देने वाली क्या तो दो शक्ति हैं ? आपकी कृपा से रहित जो जीव है वे अनन्त यत्नों को करने पर भी जन्म मरण के चक्र रूप उन दो शक्तियों से नहीं मुक्त हो सकते हैं वह यह आपकी दासी नहीं है आपकी कृपा से लक्षिता जो मैं हूँ इस समय मेरा इस प्रकार बहुत कहना दोपापत्ति है क्योंकि आपके उपकार विरुदावल व सुन्दर गुणों को जानने वाली मेरे लिये आपको प्राप्ति की रुकावट हो जायगी इस लिए बहुत क्या कहूँ ॥६॥

टिप्पणीः—यह सुकान्ति भगवत् कृपा पात्र वैष्णवों के स्थान को भगवान का लोक मानती है।

प्राप्स्यामि हेकान्त कथं कदात्वां मदालसा घूर्णित पङ्कजाक्षम् ॥
प्राणप्रिया कण्ट विलम्बि बाहुं चिन्तेति चित्तं परिक्रन्ततिस्म ॥७॥

हे कान्त ! मैं आपको प्राणप्रिया के कण्ठ में लपटे भुजाओं से मदारूण आलस्य से घूमे हुए कमल के सदृश विशाल नेत्र वाले इस प्रकार पलँग पर बैठे हुए कब किस प्रकार आपको प्राप्तकर सकूंगी। यह चिन्ता मेरे चित्त को बेचैन कर रही है ॥७॥

अन्तर्गतं प्राणभृतां समस्तं नवेत्सि किं सर्वगतो न्तरात्मा ।
गुणावलि र्दोष मुपैति नाथ ज्ञात्वा न मे शोक मपा करोषि ॥८॥

आप सम्पूर्ण प्राणियों के अन्तरात्मा में रहने वाले सर्वगत होने पर भी क्या मेरे इस दुख को नहीं जानते हैं ? दे नाथ ! यदि आप मेरे शोक को जानकर भी दूर नहीं करते हैं तो आपके समस्त गुणों की पंक्ति दोषों की पंक्ति हो जायगी ॥८॥

गुरूपदिष्टै र्विविधो पचारैर्भाव प्रयुक्तै रपि भाव सिद्धः ॥
मयार्चितो सीन कुल प्रदीप पतिर्भव त्वं जगतीपते मे ॥९॥

हे सूर्य कुल के प्रकाशक ! मैंने गुरू महाराज के उपदेशानुसार विविध उपचारों से तथा नित्य आपकी भावना करने से भी अपने भाव को सिद्ध कर रक्खा है। हे जगत के पति ! आप मेरे से पूजित हैं इस लिये मेरे पति हो जाइये ९॥

जन्मान्तरैर्भावन याभिरेमे त्वया समं राघव राजपुत्र ॥
साक्षाद्भवत्वं स्वगुणानुवृत्ते रक्षिद्वयं मे परितुष्यतीति ॥१०॥

हे राघव राजपुत्र ! मेरे अनन्त जन्मों की भावनाओंसे सिद्ध हुई मैं आपके साथ रमण करूंगी आप अपने गुण विरुदावली के अनुसार मेरे सामने प्रत्यक्ष हो जाइये, मेरे दोनों नेत्र सम्यक प्रकार तृप्त हो जायेंगे ॥१०॥

यदपि गुणगणाना मब्धिराशी न्सुखात्मा–
दिनमणि कुलभानु र्भावनीयो जनानाम् ॥
निमिकुल कुमुदानां चन्द्रिके चित्रशोभे--
तदपि तव गुणानां दीप्ति राशीत् विशेषात् ॥११॥

यद्यपि सूर्यकुल रूप कमल वन को खिलाने के लिये सूर्य के सदृश प्रियतम जू भक्तों की भावना करने योग्य समस्त गुण गणों के समुद्र यद्यपि सुखमयी आत्मा हैं तो भी हे निमिकुल कुमुद चन्द्रि के श्रीकिशोरी जी ! श्रीप्रियतम जू से शृङ्गार द्वारा चित्रित अङ्ग शोभिता हे सीते ! आपकी गुण पंक्तियों का प्रकाश श्रीप्रियतम जू की गुणपंक्तियों से विशेष है ॥११॥

यया स्वकीयै र्गुण रूप रत्नै क्रीतः स्वकान्तो नृप नाथपुत्रः ॥
मनोरथान् सिद्धतु सा मदीया न्नामप्रयुक्ता न्मिथिलेन्द्रपुत्री॥१२॥

जिसने अपने रूप गुण रूपरत्नों से अपने कान्त चक्रवर्ति कुमार को खरीद लिया है वे मिथि-लेन्द्र पुत्री मेरे नाम से प्रभावित मनोरथों को सिद्ध करें ॥१२॥

श्रीराघव प्राणपतीत्सुकानां श्रीजानकी पाद रजः प्रपत्तिम् ॥
विहाय तत्सिद्धिकरं नचान्य त्कालत्रयेलोक त्रयेपि कस्स्यात्॥१३॥

श्रीराघव जू को पति रूप में चाहने वाले भक्तों के लिए श्रीजानकीचरण रज को छोड़ करके अन्य उपायों से तीनों काल तीनों लोकों में भी श्रीराम जी की प्राप्ति के लिए कोई उपाय नहीं है ॥१३॥

रामाय सत्साधनमेक सीता तस्यै परं साधनमस्ति रामः ॥
एवम्प्रशक्ते परदेवतेद्वे परस्परं सिद्धिप्रदे भजामः ॥१४॥

श्रीराम जी के लिए सुन्दर साधन श्रीसीता जी हैं और श्रीसीता जी के लिए परम सुन्दर साधन श्रीराम जी हैं इस प्रकार के विधान पर परस्पर सिद्धि देने वाले परात्पर देवता श्रीजुगल सरकार को हम भजते हैं ॥१४॥

अस्त्वेव सन्मङ्गल मोदमूलं त्वत्पाद पद्मं मिथिलेन्द्र पुत्रि ॥
भर्तुः कराकल्पित लक्तचित्रं पवित्र पोतं भजतां भवाब्धौ ॥१५॥

संसार समुद्र में पड़े हुये जो जीव भजन करते हैं उनके लिये हे मिथिलेन्द्र पुत्री ! सुन्दर मङ्गल और आनन्द के मूल प्रियतम के करकमल से महावर आदि रचनाओं द्वारा चित्रित आपके चरणकमल ही पवित्र जहाज होवें ॥१५॥

कण्ठे विधायात्मभुजां स्वभर्तु र्मध्याह्नके भोजको त्तर च ॥
स्वापायने मञ्च समाश्रितायाः सुकल्पवीटिं वर नाग वल्याः॥१६॥

अपने प्रियतम के कन्धे में अपनी भुजा को डाली हुई दोपहर भोजन के बाद मध्याह्न शयनकुञ्ज में शयन करने के लिये पलँग के पास एक मंच में बैठी हुई आपके लिये मैं सुन्दर नागवल्ली वीरी की रचना करके ॥१६॥

बिम्बाधरा रक्त विविक्तरागे मुखे प्रदा स्यामि कदा तवाहम् ॥
इत्याभिलाषो हृदये सदामे यदा नुगृहणासि तदैव सिद्धिः ॥१७॥

बिम्बाके फलके समान अलगर दोनों सरकारके लाल अधरहैं जिनके इस प्रकार आपके मुखमें मैं कब वीरा देऊगी, यह मेरी अभिलाषा हमेशा हृदय में रहती है, जब आप कृपा कर स्वीकार करेंगी तभी सिद्धि होगी ॥१७॥

नकामुकी ते परिचारिका वै सम्बन्धमात्रं परिकामयेहम् ॥
कान्ते रमन्तीं परशीलयेत्वां ताम्बूल वारि व्यजनादिभिश्च ॥१८॥

मैं कामुकी नहीं हूँ, आपकी दासी ही हूँ, केवल सम्बन्ध मात्र की मेरी कामना है। प्रियतम के साथ रमण करती हुई आपकी मैं पान जल आदि सेवा उपचारों से सेवा करूंगी ॥१८॥

त्वत्पाद पाथोज पराग सिद्धि भजे न भाग्यं किल स्वात्म निष्ठम्॥
इष्ट प्रदे राघवपट्ट कान्ते स्वेष्टं मदीयं तव पाद सेवा ॥१९॥

मैं केवल आपके चरण कमल पराग की सिद्धिका ही भजन करती हूँ अपने प्रभाव ज्ञान या भाग्य का भजन नहीं करती हूँ। हे मनोरथ को देने वाली श्रीराघव जी की पटरानी ? मेरी इष्ट (अभि-लाषा) तो आपकी चरण की सेवा ही है ॥१९॥

गन्धर्व यक्षोरग किन्नराणां वेताल विद्याधर दिक्पतीनाम् ॥
देवाप्सरो भूमिभुजां च पुत्र्यो रामे प्रकामं नितरां रमन्ते ॥२०॥

गन्धर्व, यक्ष, नाग, किन्नर, वेताल, विद्याधर, दिग्पति, देवता, अप्सरायें राजा इन सब लोगों की पुत्रियाँ श्रीरामजी में निरन्तर मनमाना सम्यक प्रकारसे रमण करती हैं ॥२०॥

तत्रास्ति तासां तपसां फलम्वा किमस्ति तासामति रूपसम्पत् ॥
तत्कारणं ते मिथिलेन्द्र पुत्रि कृपा च शीलश्चह्युदारता च ॥२१॥

इस प्रकार की व्यवस्था में क्या उन सबकी तपस्या का फल है अथवा क्या उन सबकी रूप सम्पत्ति ज्यादा हैं ? मेरी समझ से तो हे मिथिलेन्द्र पुत्री ! आपकी कृपा, शील व उदारता ही उन सबके सुख का कारण है ॥२१॥

भविष्य योगोहि भजत्कृपालौ स्यान्मे नरामे खलु तस्य तत्वं ॥
तस्योपदिष्टा किल योगमुद्रा दौर्ल्लभ्यसिद्धिः कथमेव तर्हि ॥२२॥

आप दोनों कृपालुओं का भजन करते हुए मेरा भविष्य में योग होगा क्या? उस भ न का तत्व निश्चय करके राम जी में नही है ? (अर्थात् अवश्य है। क्योंकि उन्हीं श्रीराम जी की भेजी हुई योग-मुद्रा क्या तो थी. तब मेरे लिए यह सिद्धि दुर्लभ कैसे हो सकती है ? ॥२२॥

पूर्णाहिते राघवपट्ट कान्ते कृपा तिथी चेद् गणितेन याता ॥
कथं नु तावच्च मनोरथेन्दुः पूर्णोभवेन्मे कलया कृपालो ॥२३॥

हे राघव पटरानी जी ! मैंने भजन रूप ज्योतिष द्वारा गणना करके आपकी कृपा रूप कलाओं से पूर्ण क्यों नहीं होगा ? (अर्थात अवश्य होगा) ॥२३॥

त्व सर्व देश समयेष्वपि विद्यमानः--
सर्वान्त रस्थ मपि त्वां श्रुतयो गृणन्ति ॥
त्वा मर्थयन्ति खलु स्वात्म विदाम्वरिष्ठा-
भावाश्रयं नृपकिशोर मनोज्ञ मूर्तिम् ॥२४॥

हे प्रियतम ! आप सब देश में सब समय में सब जगह निवास करते हैं आप सबके अन्तःकरण में रहने वाले हैं—ऐसा भी आपको श्रुतियाँ गिड़गिड़ाती हैं (कहती हैं) और आत्मतत्त्व वेत्ता विद्वानों में श्रेष्ठ लोग भी मन रमणीय मूर्ति किशोर अवस्था वाले राजकुमार भाव के अधीन हैं—ऐसा निश्चय करके आप ही की प्रार्थना करते है ॥२४॥

श्रीशिव उवाच--इत्थं योग स्तवेनाथ रामं संस्तूयनिर्भरा ॥
प्रेम्णा निपतिता भूमौ चेतसा तल्लयं गता ॥२५॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि हे पार्वती ! इस प्रकार सुकान्ति ने योग समाधि में श्रीरामजी की स्तुति करके चित्त से श्रीराम जी में तल्लीन हुई प्रेम विभोरता से पृथ्वी पर गिर पड़ी ॥२५॥

श्रीयोगमुद्रोवाच—विलशसिरघुनायके नायके नवल गुणे नर राज राजपुत्रे ॥
नच कुरु शुभगे वियुक्त भावं मम वचने हि तत्तोषदानुवृत्ते ॥२६॥

श्री योगमुद्रा बोली कि हे सुभगे ! नवीन नायक के योग्य उत्तम गुण वाले चक्रवर्ति कुमार श्री

रघुनाथ जी के साथ तुम अवश्य विलास करोगी, अपने भावों को इस प्रकार विक्षिप्त मत करो । मेरे बचनों का अनुशरण करना ही तुमको सम्यक प्रकार सन्तोष देगा ॥२६॥

सम्बोधितापि वचनै रेवं सा योगमुद्रया ॥
जजागार नवा कन्या योगमुद्रापि विस्मिता ॥२७॥

इस प्रकार योगमुद्रा ने सुकान्ति को सम्बोधित करके जगाया भी पर वह राजकन्या न जागी, योगमुद्रा भी आश्चर्य चकित हो गयी ॥२७॥

नदृष्टा वहु कालाच्च मात्रा तस्या हृदि स्मृता ॥
कुत्रबालायोगमुद्रा कुत्रेति प्रति पृच्छति ॥२८॥

सुकान्ती की माता ने बहुत काल से मैंने कन्याको नहीं देखा–ऐसा हृदयसे स्मरण करके दासी से पूछा कि वह बाला सुकान्ति और योगमुद्रा कहां है ? ॥२८॥

अन्वीक्षन्ति तदा दास्यो यत्र तत्र गृहान्तरे ॥
कयाचि त्तत्र मागत्य दृष्टा निपतिताभुवि ॥२६॥

माता के पूछने पर दासियां जहां तहां घरों के अन्दर खोजने लगीं किसी दासी ने उस स्थान पर आकर के भूमि पर वेहोश पड़ी सुकान्ति को देखा ॥२६॥

तयातु कथितं तथ्यं श्रुत्वा माता पि विस्मिता ॥
आगत्य च दृष्ट्वा प्येनां योगमुद्रां पप्रच्छ सा ॥३०॥

दासी से ठीक समाचार सुनकर माता जी भी विस्मित हो गयी और वहाँ पर आकर स्वयं देखा और योगमुद्रा से पूछा ॥३०॥

वद सत्यं योगमुद्रे कथं रुष्टाहि मेसुता ॥
त्वयाकिं कथितं व्यङ्गं मुखरासि स्वभावतः ॥३१॥

हे योगमुद्रे ! सत्य बताओ मेरी यह कन्या किस तरह से रुष्ट होगयी, तुम बहुत बोलने वाली हो, तुमने स्वाभाविक इससे क्या व्यंग कह दिया है ॥३१॥

मात नं कथितं व्यंगं कथितं तु मया यदि ॥
अस्याः प्रश्नोत्तरेणैव सदृशं कथितं यथा ॥३२॥

योगमुद्रा बोली कि हे मां ! मैंने इनको व्यंग कुछ नहीं कहा, यदि कहा तो इसके प्रश्नोंके सदृश ही उत्तरों को कहा ॥३२॥

तद्वृत्तं दूरदेशीयं न शीघ्रं वोधयिष्यसि ॥
परन्तुवोधयिष्यामि धैर्येण जननिसृणु ॥३३॥

वह चरित्र दूर देशका है आप उसको शीघ्र न समझ सकेंगी, परन्तु हे माता! आप धैर्य धारण करके सुनो ता मैं समझा सकती हूँ ॥३३॥

श्रीशिव उवाच—अत्र श्रीकनकागारे रत्न पर्य्यङ्क संस्थितौ ॥
सखीनां मण्डलेसीता रामचन्द्र मनोहरौ ॥३४॥

श्रीशंकर जी बोले कि हे देवि ! इधर वह सुकान्ति की स्तुति, श्रीकनकभवन के शयनकुञ्ज पर्यङ्क में सखियों के समाज में बैठे हुए श्रीसीताराम जी मनोहर शोभित हो रहे थे ॥३४॥

॥ तत्कृता या नुति र्दिव्या दिव्यकन्या स्वरूपिणी ॥
तत्रागत्याञ्जलिं बध्द्वा तयो रास्ये लयं गता ॥३५॥

उनके सामने गयी दिव्य कन्या के स्वरूप से वह दिव्य स्तुति हाथ जोड़कर श्री जुगल सरकार की सुकान्ति के सदृश स्तुति करके श्रीजुगल सरकार के श्रीमुख में प्रवेश कर गयी ॥३५॥

एतच्च कौतुकं दृष्ट्वा पृच्छन्तिस्म परस्परम् ॥
त्वयदृष्टं मयैवैत त्कथ्यतेव परस्परम् ॥३६॥

सखियों ने यह कौतुक जब देखा तब आपस में पूछने लगीं कि यह दृश्य तुमने भी देखा कि केवल मैंने ही देखा इस प्रकार कह कर आपस में सबने निश्चय पाया ॥३६॥

॥ सर्वा अपि च श्रीरामं हृदि विस्मय दायकम् ॥
॥ चरित्रं प्रष्टु मिच्छन्ति न च पृच्छन्ति लज्जया ॥३७॥

सब मिल करके श्रीराम जी से भी यह विस्मयदायक चरित्र को हृदय से पूछना चाहती थीं पर लज्जावश न पूछ सकीं ॥३७॥

स्वात्मानं प्रति जिज्ञासां तासां नेत्रानुभावतः ॥
विदित्वा रामचन्द्रेण कृतं चाद्भुत कौतुकम् ॥३८॥

आपस में ही जिज्ञासा करती हुईं सखियों के नेत्र अनुभावों से जानकर श्रीरामचन्द्रजी ने एक अद्भुत कौतुक किया ॥३८॥

या पूर्वं राजकन्याया नुतिः स्वास्ये लयंगता ॥
सा सर्वासां सखीनाञ्च मण्डलेप्रकटी कृता ॥३९॥

जो स्तुति राजकन्या के रूप में श्रीसीतारामजी के मुख में प्रवेश कर गयी थी उस स्तुति रूपा-सखी को सब सखि मण्डल के बीच प्रकट कर दिया ॥३९॥

बर्णशक्त्या वर्ण गर्भं तयाविरह मार्जवम् ॥
स्वरेण करुणा ढ्येन कृतं गानं मनो द्रवम् ॥४०॥

उस स्तुति ने स्वरूपा शक्ति से फिर राजकन्या का रूप धारण करके बड़ी सरलता पूर्वक करुणामयी स्वर से विरह से मन को द्रवित करने वाला गान किया ॥४०॥

श्रीरामस्यापि जानक्याः सर्वासां हृदयं तदा ॥
द्रावितं राजकन्याया विरहा तिशयेन च ॥४१॥

उस समय श्रीराम जानकी जी का भी सब सखियों का भी हृदय उस राजकन्या के विरह में अतिशय द्रवित हुआ ॥४१॥

उद्वाहयित्वा मेनाथ शीघ्रमेतां त्वमानय ॥
इत्थं श्रीरामचन्द्रोपि प्रेरितः सीतया स्वयम् ॥४२॥

हे नाथ ! इस राजकन्या को विवाह करके आप शीघ्र ले आइये इस प्रकार श्री सीता जी ने स्वयं श्रीरामचन्द्र जी को प्रेरणा भी किया ॥४२॥

श्रीशिवउवाच–अथात्रयोगमुद्रापि मातरं श्चावदद्यथा ॥
तच्छृणु प्रवरं देवि स्वात्मबोध प्रकाशकम् ॥४३॥

श्री शंकर जी बोले कि हे पार्वती ! इधर योगमुद्रा ने भी माता जो कहा उसको भी तुम सुनो । हे देवि ! वह प्रसङ्ग भी आत्मा को ज्ञान-प्रकाश देने वाला है ॥४३॥

योनमुद्रोवाच–एकाकिनी मातरत्र स्थितांदृष्ट्वा विचिन्तिताम् ॥
उन्मनाश्चापि ह्येनाश्चाहं सान्निध्यंसमागता ॥४३॥

योगमुद्रा बोली हे माता ! यह सुकान्ति को इस एकान्त स्थान में मैंने चिन्ता में पड़ी देखा इसका मन कुछ खिन्न था । मैं समीप में आयी और पूछा कि ॥४४॥

किं विचारयसी त्येषां मया पृष्टास्वभावतः ॥
तदा नयापि कथितं स्वेच्छितं हृदये यथा ॥४५॥

तुम क्या विचार कर रही हो मेरे इस प्रकार पूछने पर इसने भी स्वाभाविक जो कुछ भी इसके मन में था। जैसा का तैसा कह दिया ॥४५॥

स्वात्म रूप कुलार्हश्च वरम्प्राप्स्याम्यहम्कथम् ।
उभयं ह्युत्तमं लोके नारीणां दुर्ल्लभं महत् ॥४६॥

मेरे रूप और कुल के अनुकूल वर को मैं कैसे प्राप्त करूंगी इन दोनों का उत्तम होना लोक में स्त्रियों के लिये अत्यन्त दुर्लभ है ॥४६॥

अभिनंद्य च तद्वाक्यं दर्शित श्चोत्तमोबरः ॥
रामो राजकुमारोसौ जगन्नायक नायकः ॥४७॥

इनके प्रश्न की प्रशंसा करने हुये मैंने उत्तम वर इसको दिखा दिया । समस्त जगत के नायक चक्रवर्ति कुमार श्रीराम जी को नायक रूप में इसको बताया ॥४७॥

जन्मान्तरैः साधितश्चाऽन यापि तपसा ब्रतैः ॥
तदेवहि स्मृतिर्जाता सानुरागतया हृदि ॥४८॥

इसका भी अपने जन्मान्तरीय तपस्या व्रतों से साधित अनुराग हृदय में जग आया ॥४८॥

पुनः पृष्ट श्च तद्वृत्तं समग्रन्नाम रूपतः ॥
परिवार समेतस्य मयापि कथितंयथा ॥४६॥

इसने फिर सम्यक प्रकार नाम रूप परिवार समेत उस बृतान्तका प्रश्न किया मैंने भी जैसा का तैसा कह दिया ॥४६॥

श्रुत्वा सर्वं विधानेन रामं राजीव लोचनम् ॥
स्वकान्तं तां संस्तूयाथ प्रेम्णेयं पतिताभुवि ॥५०॥

सम्यक प्रकार विधान में राजिव लोचन रामजी का बृतान्त सुना उसके बाद अपने कान्त रूप में उनकी स्तुति की उसी प्रेम से विभोर होकर यह पृथ्वी पर गिर गयी है ॥५०॥

शिवउवाच--श्रुत्वेति विस्मिताभूत्वा योगमुद्रा म्पप्रच्छसा ॥
कथं जानासि त्वं वाला जन्मतोसि गृहेहिमे ॥५१॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि यह सुनते ही माता विस्मित होकर फिर योगमुद्रा से पूछने लगी कि हे बाले! तुम तो जनम से ही हमारे घर में रहती हो फिर यह वृत्तान्त कैसे जानती हो ॥५१॥

यथार्थंवद कल्याणि देवता सि न मानुषी ॥
इत्युक्ता योगमुद्राया श्चरणे शिरसानता ॥५२॥

हे कल्याणि! तुम मनुष्या नहीं हो कोई देवी मालूम होती हो, ठीक २ बताओ—इतना कहकर योगमुद्रा के चरणों में सिर नवाया ॥५२॥

तदा तस्यै स्वयश्चापि कथितं योग मुद्रया ॥
इत्यन्तरे सापि कन्या जजागार समाधितः ॥५३॥

उस समय योगमुद्रा ने भी माता के लिये सब समाचार स्वयं कहा इसी बीच में वह कन्य सुकान्ति भी समाधि से जाग गयी ॥५३॥

अङ्के प्रस्थाप्य तांमाता हस्तौधृत्वा च मस्तके ॥
दुःखितासि कथं पुत्रि वाञ्छितंते भविष्यति ॥५४॥

माता ने उसे अपनी गोदी में बैठाया, मस्तक पर हाथ दिया, हे पुत्री! दुखी क्यों होगयी? तुम्हारा मनोरथ पूर्ण होगा ॥५४॥

आश्वास्य वचनै पुत्रीं योगमुद्रां पुनश्च सा ॥
समब्रवीत्तु जननी वदास्याः यद्भविष्यकम् ॥५५॥

इस प्रकार बचनों से पुत्री को आश्वासन देकर फिर योगमुद्रा से माता बोली कि इस कन्या के भविष्य को भी बताओ ॥५५॥

विश्वास स्त्वयि मे साध्वि मन्येहं देवतां हित्वाम् ॥
प्रशंस्य श्चातिभाग्यम्मे जनिष्ठा यद्गृहे शुभे ॥५६॥

हे साध्वी! मैं तुमको देवता मानती हूँ, मेरा तुममें विश्वास है। हे शुभे! तुमने हमारे ही घर में जन्म लिया है, इसलिए हमारा धन्य भाग्य है हम प्रशंसनीय हैं ॥५६॥

उभेच पुण्यकृतपूर्वे गूढ रूपे नमामहे ॥
अस्या कार्य्यं त्वदाधीनं त्वमेव शरणं शुभे ॥५७॥

तुम दोनों पूर्व जन्म के महान पुण्य किये हुये फल रूप में छिप कर प्रगट हुई हो। इस कन्या का समस्त कार्य तुम्हारे अधीन है। हे शुभे हम तुम्हारी शरण में हैं ॥५७॥

इत्येवं वचनं श्रुत्वा कन्या मातुः शुभाक्षरं ॥
अब्रवी द्योग मुद्रा तां तस्याः कार्य्य परायणा ॥५८॥

कन्या की मां के शुभ अक्षरों में इस प्रकार बचन सुनकर उसके कार्य में परायण हुई योगमुद्रा बोली ॥५८॥

योगमुद्रोवाच--श्रूयतां वचनं मातः सत्यं वक्ष्यामि त्वां यथा ॥
सर्वेश्वरस्य रामस्य शक्तिरेव मनोभवा ॥५९॥
अस्या हेतोवतीर्णाहं गृहे तव तदिच्छया ॥
विवाहो ध्रुव मस्याश्च श्रीरामेण भविष्यति॥६०॥

हे माता ! सत्य वचन आपसे कहती हूँ सुनो "मैं सर्वेश्वर श्रीरामजीकी मनसे उत्पन्न हुई कृपा शक्ति हूँ, उन श्रीराम जी की इच्छा से इस कन्या के ही लिए तुम्हारे घर में प्रकट हुई हूँ इसका विवाह श्रीराम जी के साथ होना निश्चित है ॥५९-६०॥

अनया राधिता एव जपेन तपसा व्रतैः ॥
अद्य जन्म फलं तेषां प्राप्नोति नात्र शंशयः ॥६१॥

क्योंकि इसने पूर्व जन्म से ही तपस्या व्रतों से आराधना कर रक्खी है सो इस जन्म में उन व्रतों का फल प्राप्त करेगी इसमें संशय नहीं है ॥६१॥

एतावच्च निमित्तम्मे यास्याम्यद्य स्वयं पदम् ॥
मातः पुत्र्य श्चतस्रोपि रामाय दातु मुद्यता॥म् ॥६२॥

वस मेरा इतना ही काम था अब मैं अपने धाम को जाती हूं । हे माता आप इन चारों कन्याओं को श्रीराम जी के लिये देने का उद्योग करें ॥६२॥

राज्ञे सर्वं प्रतिश्रुत्य सुकान्त्यामे प्रयोगिकम् ॥
पुरोधसं प्रेषयित्वा चायोध्यां कार्यमावह ॥६३॥
एतदुक्ता योगमुद्रा समास्वस्य सुकान्ति काम् ॥
विद्यु दिवगताकाशंसुकान्ति रपि विस्मिता ॥६४॥

मैंने सुकान्ति के लिये जो निश्चय बता रक्खा है आप महाराज को इस वात को सुना करके श्री अयोध्या जी में पुरोहित को भेजकर कार्य को निश्चित करें—इतना कहकर योगमुद्रा सुकान्ति को आलिंगन करके बिजलीकी तरह चमक कर आकाशमें चली गयी यह देखकर सुकान्ति भी विस्मित होगई॥६४॥

आश्रावि योगधीराय राज्ञे यद्योग मुद्रया ॥
राज्ञापि कथितं पुत्र्याः विवाहाय निमित्तकम् ॥६५॥

महारानी ने भी योगमुद्रा का यह सब चरित्र महाराज योगधीर जी को पुत्री के विवाह निमित्त सब कह सुनाया ॥६५॥

श्रुत्वा तद्योगधीरोसौ श्रीरामेभावयोगिकः ॥
सान्निध्यं हृदये दृष्ट्वा स्वस्याः भक्तेः फलोदयम् ॥६६

यह सुनकर राजा योगधीर भी श्रीराम जी में भाव योग करने वाले अपनी भक्ति का फल उदय होना अत्यन्त निकट है ऐसा हृदय में निश्चय किये ॥६६॥

जन्मान्तरीय वृत्तान्तं राज्ञि प्रति सुवर्णितम् ॥
यथासत्सङ्ग सम्प्राप्तिः जाता भक्ति र्यथोत्तमा ॥६७॥

अपने जन्मान्तरीय चरित्र को भी जिस प्रकार सतसंग प्राप्त हुआ था, उत्तम भक्ति उत्पन्न हुई थी सब रानी को वर्णन करके सुनाया ॥६७॥

राजोवाच--जन्मानि सप्तमे राज्ञि लोकेसुकृत संश्रयैः ॥
अभूद्राजकुले तत्र त्वञ्चासी त्सहधर्मिणी ॥६८॥

राजा बोले हे रानी! लोक में सुकृत्य आश्रय किये सात जन्म बीत गये हैं मैं पूर्व जन्म में भी राजकुल में ही उत्पन्न हुआ था आप ही मेरी सहधर्मिनी थीं ॥६८॥

जन्मनः सप्तमस्याद्य वार्त्ताम्वदयामि तच्छृणु ॥
प्रभावती पुरीतत्र राजधानी सुभावनी ॥६९॥

अब मैं अपने सातवां जन्म की बात कहता हूँ सुनो एक प्रभावती नगरी में सुभावनी नाम की राजधानी थी वहां पर ॥६९॥

गते तु द्वापरे प्राप्ते कलौ मे जन्म चाभवत् ॥
तथापि भगवद्भक्त्या सतां संसर्गतो मया ॥७०॥

द्वापर के अन्त कलियुग के प्रारम्भ में मेरा जन्म हुआ था तो भी सन्तों के संसर्ग से, मेरी भगवद्भक्ति से ॥७०॥

राज्यं धर्म्मेण नीत्यापि कृतं यज्ञादि सत्कृतैः ॥
त्वयि चैकात्मजे जाते विनीते राज विद्यया ॥७१॥

धर्म पूर्वक नीति युक्त राज्य पालन करते हुए यज्ञादि सत्कृत्यों को किया, आपसे मेरा एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसके राजविद्या में निपुण होने पर ॥७१॥

राज्यभारन्निधायाथ त्यक्तभोगो वभू वच ॥
त्वयासमम्पुन र्देवि गृहीत व्रत आत्मवान् ॥७२॥

मैंने राज्यभार उसको दे दिया और मैं भोगों से निवृत्त होकर के मनस्वी व्रत लेकर तुम्हारे साथ ॥७२॥

ब्राह्मणैश्च प्रजावृद्धै र्जगाम तीर्थ दर्शने ॥
यथा शास्त्र विधानेन कृत्वा तीर्थाटनं पुनः ॥७३॥

बहुत से ब्राह्मण तथा बृद्धजनों के साथ तीर्थ दर्शन के लिए शास्त्र विधान के अनुसार गया, तीर्थाटन किया ॥७३॥

सहचारी जनान्प्रेष्य त्वयैकया समास्थितः ॥
गोदावर्य्या स्तटे दिव्ये ह्याश्रमोस्ति महामुनेः ॥७४॥

फिर अपने साथ के जनों को घर भेज दिया। केवल एक तुम्हारे साथ गोदावरी नदी के तट पर निवास करने लगा वहां पर एक महामुनि अगस्त्य जी का एक दिव्य आश्रम था ॥७४॥

अगस्त्यस्याप्त सिद्धे श्च तत्रोवास हरिं भजन् ॥
व्यतीते वहु वर्षेतु भजनस्य फलोदये ॥७५॥

पर्याप्त सिद्ध श्रीअगस्त्यजी भगवानका भजन करते हुए वहाँ वास करते थे मैं भी वहां रहते बहुत वर्ष बीते मेरे भजन का फल उदय होने समय ॥७५॥

एकदा स मुनि स्साक्षा त्समीपे मे समागमत् ॥
ज्वलदग्नि रिवात्मानन्द शर्यं श्च पठन्मुखे ॥७६॥

एक बार वे मुनि साक्षात् मेरे समीप आपहुंचे। जलती हुई अग्नि ज्वाला सदृश दर्शन दिये मुख में पाठ करते हुए ॥७६॥

सीतारामेति रामेति श्रीरामेति पुनः पुनः ।
प्रणम्य चाशनन्दत्त मज्ञात्वापि मया ततः ॥७७॥

सीताराम राम श्रीराम बार बार कहते हुए मेरे आसन पर आये, मैंने प्रणाम किया, आसन दिया, मैंने उनको पहिचाना भी नहीं ॥७७॥

कृताञ्जलि पुटं दृष्ट्वा मान्तिष्ठे त्यपि सोऽब्रवीत् ॥
कृत प्रश्ने मुनौसर्वंह्यात्म तत्व न्निवेदितम् ॥७८॥

फिर भी दीन होकर हाथ जोड़कर पास में खड़ा था वे मुनि इस प्रकार मेरे को देखकर मुझसे बैठो—ऐसा कहे और मैंने बहुत से प्रश्न मुनिजी से किये, मुनि ने आत्म तत्व मुझे बताया ॥७८॥

श्रुत्वा सोपि महा तेजाः धन्योसिमयि प्रोक्तवान् ॥
तम्प्रसन्नम्मयाः ज्ञात्वात त्स्वरूपे यथार्थकम् ॥७९॥

मेरे प्रश्नोंको सुनकर महातेजस्वी ऋषि भी राजन् तुम धन्यहो-ऐसा मुझसे कहे। मैंने मुनिजी को प्रसन्न जानकर मुनि जी के सामने यथार्थ स्वरूप में यथार्थ प्रश्न किया ॥७९॥

कृतम्प्रश्न न्तदा तेना गस्त्योह मिति ज्ञापितम् ॥
श्रुत्वा नामंपरम्ख्यातम्म यात्मानम्पर म्मतम्॥८०॥

मेरे प्रश्न को सुनकर मुनि जी ने मैं अगस्त्य हूँ ऐसा बताया। इस परम प्रसिद्ध नाम को सुनकर मैंने अपनी आत्मा को धन्य माना ॥८०॥

कृत्वा दण्ड प्रणामश्च मुनेः पादाब्जमास्पृसम् ।
दण्डवत्पतितम्भूमौ गृहीत्वातु करम्पुनः ॥८१॥

दण्डवत प्रणाम किया, मुनि के चरणकमलों का मार्जन किया। अन्तिम में मैं पृथ्वीमें दण्ड की तरह गिर गया मुनि मेरे हाथ को पकड़ कर फिर ॥८१॥

उत्थाप्यमांतदा श्लिष्य मुनि रग्रे निवेश्य च ॥
वरम्वृणोष्व पुत्रेति प्रसन्नोह मथाब्रवीत् ॥८२॥

उठाये, मेरे को गले से लगाये, अपने आगे बैठाये। हे पुत्र मैं प्रसन्न हूँ वरदान मांगों ऐसा कहे ॥८२॥

तदोन्मितम्मया सर्व न्नाशयुक्तन्तु प्राकृतम् ॥
तुभ्यंयद्रोचते नाथ यद्ध्यायसि निरन्तरम् ॥८३॥

तब मैंने अनुमान किया कि सबतो नाशवान् प्राकृत ही है। हे नाथ! आपको जो रुचिकर हो, जिसका निरन्तर ध्यान करते हैं ॥८३॥

तन्मेदेहिमहादातः मयैवंयाचितो मुनिः ॥
दीनं खत्तत्व हीनम्मांयाचकं सोप्युदारधीः ॥८४॥

हे महान दाता! वही मुझे दीजिये। इस प्रकार जब मैंने मुनि जी से याञ्चा की तब दीन, सत् तत्व से हीन इस प्रकार याचक मुझको जानकर उदार बुद्धि मुनि भी ॥८४॥

मुनी एडगल्पः श्रीमान्विलोक्य प्रणयान्वितम् ॥
सर्वस्वं हि यदात्मीयंरामतत्वाव्ययम्परम् ॥८५॥

अपने सिर को हिलाये और मेरे को प्रणय में भरे हुये देखकर अपने प्रभाव से मुनि समूह को छोटा करने वाले श्रीमान् अगस्त्य जी अपने सर्वस्व आत्मीय परम अव्यय श्रीराम तत्व को ॥८५॥

संस्कृत्य निहितन्तेन मयि सर्वाति दुर्ल्लभम् ॥
त्वश्चापि संस्कृता तेन संस्कारेण कृपालुना ॥८६॥

मेरा पञ्च संस्कार करके उस सबको अति दुर्ल्लभ तत्व मेरे में निहित किये और फिर हे देवि! उन कृपालु अगस्त्य जी ने तुम्हारा भी संस्कार किया ॥८६॥

स्त्री बालाना न्नाधिकार स्तत्व ज्ञाने हि सर्वथा ॥
पुनर्भावात्मकं शास्त्रम्प्रख्यातम्मुनिना तदा ॥८७॥

तत्व ज्ञान में स्त्री और बालकों का सर्वथा अधिकार नहीं है तथा श्रीअगस्त्य जी ने कुछ भावात्मक शास्त्रों को भी कह करके सुनाया ॥८७॥

वात्सल्ये मे रुचिं ज्ञात्वा स दत्तो हर्षितेनवै ॥
मयारामे राजपुत्रे सर्वाराध्ये परे प्रभौ ॥८८॥

सर्वाराध्य परात्पर प्रभु राजपुत्र श्रीरामजीमें मेरी वात्सल्य रुचि जानकर प्रसन्न हुए ऋषि उसी अनुकूल उपदेश किया ८८॥

कृतज्ञामात्रि भावम्वै गुरुणापि शुभम्मतम् ॥
रामात्मक श्च सर्वंहि रामः सर्वात्मकस्तथा ॥८९॥

मैंने जो सर्वात्मक तथा जो सबरूप से है राम जी उनमें जामाताभाव किया तो गुरू महाराज उसको अच्छा सम्मत् दिया ॥८९॥

ईश्वराणामीश्वरोपि रामो दाशरथि स्स्वयम् ॥
माधूर्य्यभाव वश्योपिभावै राम स्सदैवहि ॥९०॥

यद्यपि श्रीदाशरथी रामजी ईश्वरों के भी ईश्वर हैं माधुर्यभाव के वश में हो करके सबके भाव से सम्यक प्रकार सदैव सबको प्राप्त होते हैं ॥९०॥

इति ज्ञानम्मयादत्त न्निधाय हृदये स्वयम् ॥
श्रीरामं सीतया युक्तं याव ज्जीवम्भजायतम् ॥६१॥

इस प्रकार श्री गुरू महाराज ने मुझे ज्ञान दिया मैंने अपने हृदय में धारण करके श्रीसीता-सहित श्रीराम जी का जीवन भर भजन किया ॥६१॥

इत्येवम्मांसाधयित्वाप्यन्त र्धीरभन्मुनिः ॥
पुनश्च भुज्यप्रारब्धन्देहे काल वशङ्गते ॥६२॥

इस प्रकार मेरे को शिक्षा देकर मुनि महाराज अन्तर्धान हो गये। मैंने प्रारब्ध को भोगा, शरीर काल के अधीन होने पर फिर ॥६२॥

अन्तरेणाप्यहन्त्वञ्च श्रीमद्गुरुप्रसादतः ॥
तिष्ठे नित्याव्ययं स्थानम्माधूर्य्य लोक संज्ञकम् ॥६३॥

मैं और तुम श्री गुरु महाराज की कृपा से नित्य अव्यय माधुर्य लोक नामक स्थान में अन्तरात्मा से आकर यहां निवास कर रहे हैं ॥६३॥

तदाराधितभावस्य समयो ह्यागमत्प्रिये ॥
पुत्रि प्रदाना द्रामश्च जामाताहि भविष्यति ॥६४।

उस समय के आराधना भाव का फल प्राप्ति समय आगया है हे प्रिये! इन पुत्रियों के प्रदान से श्रीराम जी हमारे दामाद हो जांयगे ॥६४॥

इति श्रीशङ्करकृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां योगमुद्रा तिरोधान राज्ञिप्रबोधो नाम सप्तचत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥४७॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां योगमुद्रा तिरोधान राज्ञि प्रबोधो नाम सप्तचत्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४७॥

श्रीशिव उवाच-एवं राज्ञः प्रति श्रुत्य ह्यात्मनोनुभवात्मकम् ॥
योगधीरोपि नृपति स्तद्योगायोद्य तोभवत् ॥१॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि इस प्रकार रानी के लिये अपनी आत्मा का अनुभवात्मक योग को सुना करके फिर योगधीर राजा भी उन कन्याओं के विवाह उद्योग में लग गये ॥१॥

गुरूमाहूय चादत्य सर्वं तस्मै निवेद्य च ॥
मुख्यामात्यं समाहूय तस्मै चापि निवेदितम् ॥२॥

अपने गुरु महाराज को बुलाकर सब समाचार निवेदित किये तथा मुख्य मन्त्री को भी बुलाकर सब कुछ कहे ॥२॥

चरित्रेयोगमुद्रायाः सर्वेविस्मितमानसाः ॥
वभूवु नृंपते र्वार्ताश्रुत्वा ये ये महाशयाः ॥३॥

योगमुद्रा के चरित्र को जो जो महाशय राजा से सुने सुन करके सब चकित चित हुए ॥३॥

लिखितं योगधीरेण राज्ञा मात्येन मन्त्र्य च ।
पत्रिकां कौशलेन्द्राय विनया च्छतशोधिकाम् ।४।।

महाराज ने मन्त्री से सम्मत् लेकर एक पत्र लिखा। सैकड़ों बार संशोधन करके उस पत्र में कोशलेन्द्र महाराज के लिए विनय लिखा ।।४।।

नत्यो नाना विधाने न विज्ञानां हृदयंगमाः ।
तां पत्रीं गुरू हस्ते च दत्वा विनय माश्रयन् ।।५।।

उस पत्र में विज्ञ पुरुषों के हृदय को आकर्षण करने वाली नाना प्रकार की स्तुतियां लिखीं थीं उस पत्रिका को बड़े विनय पूर्वक गुरु महाराज के हाथ दिया ।।५।।

अयोध्यां प्रस्थितः सद्यः शुभलग्ने सुदर्शनैः ।
शीघ्रं स्वात्म प्रभावेना योध्यां विप्रः समागतः ।।६।।

सुन्दर लग्न संशोधन करके शीघ्र अयोध्या के लिये चलते भए। आत्म योग के प्रभाव से ब्राह्मण तुरन्त पहुंचे ।।६।।

समागम्य वशिष्टश्च नृपतेन समागमत ।।
अत्र देवि नृपस्यापि श्रीमद्दशरथस्यतु ।।७।।

प्रथम श्री वसिष्ठ जी से मिल करके तब महाराज श्रीचक्रवर्ति जी से समागम हुआ। शंकर जी बोले कि हे पार्वती! श्रीमान् दशरथ जी महाराज को भी यह बात ।।७।।

पूर्वमेवहि ज्ञातृत्वे यस्मिन्विप्र गमागतः ।।
निमित्ते तत्प्रवक्ष्यामि कारणं रसवद्यथा ।।८।।

जिस काम के लिए ब्राह्मण आये थे वह बात मालूम थी इसके मालूम होने का कारण को मैं तुमसे कहता हूँ क्योंकि वह रसमयी कथा है ।।८।।

श्रीरामस्या नुरागस्या लौकिकत्व म्विशेषतः ।।
यदाप्रभृतिरेवात्र राजकन्या नुतेः प्रभा ।।९।।

जबसे सुकान्ती की स्तुति श्रीरामजी को प्राप्त हुई तब से श्रीराम जी का भी अलौकिक भक्त वात्सल्य अनुराग अति बढ़ा हुआ था ।।९।।

हृदये रामचन्द्रस्य प्रविष्टा विस्मयङ्करा ।।
तदाप्रभृति रात्मान मपस्मार्य्य रघूत्तमः ।।१०।।

क्योंकि वह सुकान्ती का अनुराग आश्चर्यजनक था जो श्रीरामजी के हृदय में प्रवेश किया हुआ था तब से श्रीराम जी अपने शरीर को भी भूले रहते थे ।।१०।।

करोति दैहिकं सर्व मभ्यासान्नतु चेतसा ।।
तां गति म्प्रिय पुत्रस्य दृष्ट्वा कौशलपालकः ।।११।।

जितने भी शारीरिक कृत्य हैं वे सब केवल अभ्यास से ही हुआ करते थे मन तो सुकान्ती में ही लगा रहता था। इस प्रकार प्रिय पुत्र की व्यवस्था को देखकर महाराज श्रीदशरथ जी ।।११।।

सततं चिन्तया युक्तो वशिष्टोपि ददर्श च ॥
प्रभावं रामचन्द्रस्य भाग्यं दशरथस्य च ॥१२॥

हमेशा चिन्ता में रहते थे श्रीवशिष्ठजी महाराज भी यह दृश्य देख रहे थे और श्रीराम जी का प्रभाव तथा श्रीदशरथ जी का भाग्य दोनों को जानते थे ॥१२॥

तदा चा गम निर्देशै वंशिष्टेन महात्मना ॥
भविष्यं कथितं सर्वं नृपकन्या समागमम् ॥१३॥

श्री महात्मा वशिष्ठ जी ने शास्त्र का उपदेश तथा राजकन्या का भविष्य समागम होना भी कहा ॥१३॥

श्रीवशिष्टोवाच–सदेवाग्र इति ख्यातं श्रुतिभिः परमाभ्दुतम्॥
लक्षणैक तयातच्च द्वयमेकी कृतम्यथा ॥१४॥

श्री वसिष्ठ जी ने कहा कि हे राजन्— सदेव सौम्येद मग्र मासीदिति, छान्दो० अ० ६ खं० २ हे सौम्य यह सत् पद वाच्य ईश्वर सर्वेश्वर परात्पर हैं, इस वेद से परम अद्भुत लक्षणों वाले परात्पर ब्रह्म श्रीरामजी की इस चेतन आत्मा से जिस प्रकार एकता है, वह हम कहते हैं, सुनो ॥१४॥

सन्मात्राच्च चिन्मात्रा च्च लक्षणैक तया तथा ॥
कथितं श्रुतिभिः साक्षा देक्यं तु जीव ब्राह्मणोः ॥१५

सत् मात्रा से और चित मात्रा से लक्षण कर सकता है इस प्रकार बेदो श्रुतियों द्वारा जीव ब्रह्म की साक्षात एकता को कहा है ॥१५॥

व्यतिरेक म्पुन र्द्दृष्टा वहुभिश्चान्यलक्षणैः ॥
उक्तं तत्वमसीत्येवं वाक्यं द्वैतात्मकं नृप ॥१६॥

बहुत से अन्य लक्षणों द्वारा फिर अलग भी इसको देखा गया है, क्योंकि हे राजन् तत् त्वम् असि इन शब्दों से द्वैतात्मक भेद वाक्य भी मिलते हैं ॥१६॥

तत्पदे ब्रह्म विज्ञेयो जीवो सावस्ति त्वम्पदे ॥
ब्रह्मैक ईश्वर स्वामी दाशं किङ्कर एव सः ॥१७॥

क्योंकि तत् पद से ब्रह्म को जानना चाहिये त्वम् पद से जीव को जानना चाहिये—इस प्रकार के पद से स्वामी ईश्वर एक ब्रह्म हैं दास, सेवक भोग्य इन भेदों से ॥१७॥

जाति वाचि तयैकत्वं वहुत्त्वं रूप व्यक्तितः ॥
चतुष्टय मवस्थाभि र्जीवेषूक्तं महात्मभिः ॥१८॥

अलग २ जाति वाचक होने से जीव में वहुरूपत्व दर्शित हुआ। महात्माओंने जीवोंमें अवस्था भेद द्वारा चार जाति बतायीं हैं ॥१८॥

नित्यावस्थातथा मुक्ता वध्दा स्तत्र मुमुक्षवः॥
नित्याः मुक्ताः परेधाम्नि मर्त्ये वध्दाः नुमुक्षवः॥१९॥

एक तो नित्य पार्षद, दूसरे मुक्त पार्षद, तीसरे बद्ध जीव, चौथे मुमुक्षु जीव हैं। नित्य और मुक्त जीव तो पर धाम में पार्षद रूप से हैं, बद्ध और मुमुक्षू इस मृत्यु लोक में हैं ॥१९॥

वध्देषु सुकृतैः कश्चिद् गुरूं लव्ध्वामुमुत्तुषु ॥
संसर्गं प्राप्नुया त्काले ततोभक्तिः प्रजायते ॥२०॥

बद्धों के महान पुण्य द्वारा किसी को यदि गुरू मिल गये तो वह गुरु-संसर्ग से मुमुक्षता को प्राप्त कर लेता है तब समय पाकर के भक्ति उत्पन्न होती है ॥२०॥

भक्ते र्भावाहि चत्वारो दाश्यो वात्सल्यक स्तथा ॥
सख्य स्तथा च श्रृंगारः केषां शान्तोपि सम्मतः॥२१॥

भक्ति के दास्य, वात्सल्य, सख्य, श्रृङ्गार चार भाव हैं। किन्हीं २ ने शान्त को भी मान लिया है ॥२१॥

तेतु भावाहि भक्तस्य सिद्ध कालेऽङ्कु रायते ॥
प्राप्ते चतुर्दशे वर्षे नारीणां यौवनाङ्ग वत् ॥२२॥

वे चारों भाव भक्त के सिद्ध काल में जिस प्रकार स्त्रियों का १४ वाँ वर्ष का उम्र होने पर युवा वस्था अंकुरित होती है उसी तरह से अंकुरित होते हैं ॥२२॥

तदा तस्मिस्तु श्रीरामो दृढ सम्वन्धभावतः ॥
द्रवत्या त्मतया साक्षा त्स्वीकारं प्रकरोति च ॥२३॥

इस प्रकार सम्बन्ध भावों के दृढ़ हो जाने पर उसी भाव के अनुकूल द्रवित होकर श्रीराम जी साक्षात् स्वीकार कर लेते हैं ॥२३॥

पूर्वन्तु सत्पदैक्येन सम्वन्धो जीव ब्रह्मणोः ॥
तथाप्यप्राप्तभावस्तु न रामं लभते क्वचित् ॥२४॥
वयंसर्वे कौशलेन्द्र भावसिद्धाहि ज्ञायताम् ॥
श्रीरामेप्राप्त सम्वन्धा अस्मिन्नित्ये निवासिनः ॥२५॥

प्रथम तो इस जीव का परमात्मा से सत्य पद में एक सम्बन्ध है तो भी भाव की प्राप्ति न होने से यह चेतन आत्मा किसी तरह से भी राम जी को नहीं पासका। हे राजन ! हम सब लोग पहले से ही श्रीरामजी में सम्बन्ध भाव को प्राप्त कर सिद्ध होकर के इस नित्य धाम में निवास कर रहे हैं ॥२४-२५॥

केचित्प्राप्ताः प्राप्नुवन्ति प्रापयिष्यन्ति केचन ॥
सम्वन्धैस्तु चतुर्भिश्च नान्योपायो नराधिप ॥२६॥

और कोई प्राप्तकर लिए, कर रहे हैं तथा आगे भी करेंगे। हे नराधिप इन चार सम्बन्धों के बिना और कोई उपाय श्रीराम जो की प्राप्ति के लिये नहीं है ॥ ६॥

लोके मानुष्यके भक्ताः श्रृंगार रस सम्मताः ॥
आत्मानं प्रेयसी भावं श्रीरामे भावयन्तिये ॥२७॥

इस मनुष्य लोक में जो भक्त अपनी आत्मा को श्रीरामजी में प्रेयसी भाव से भावना करते हैं उनका भाव श्रृङ्गार रस में मान्य है ॥२७॥

प्राप्तकाले स्वकीयन्ते त्यक्त्वा कलेवर त्रयम् ॥
प्राप्नुवन्तिवरश्राम म्त्रिधिनो पयमेन च ॥२८॥

समय पाकर वे महात्मा स्थूल, सूक्ष्म, कारण तीनों शरीरों को त्याग करके प्रियतम भाव में रमणशील श्रीराम जी को विवाह विधि से प्राप्त कर लेंगे।।२८।।

प्राप्य श्रीराम संसर्गं सगुणंनिर्गुणम्भवेत् ॥
अपवित्रम्यथा वारि गङ्गायां सुचिकारकम् ॥२९॥

श्रीरामजी को प्राप्त हुआ चेतन आत्मा को मायिक सगुणता मिट करके प्रकृति से परे निर्गुणत्व प्राप्त हो जायगा जिस प्रकार अपवित्र जल गंगा में पड़ने से पवित्र हो जाता है ॥२९॥

नित्योत्सवस्य रामस्य ब्रह्मलोकेंत्विहापि च ॥
सन्ति नित्यं विवाहाश्च भाविका फल माययुः ॥३०॥

श्रीरामजी के विवाहादि उत्सव दिव्य धामों में तथा प्रकृती मण्डल में सर्वत्र हुआ करते हैं भक्तजन अपने अनुभवों से फल नुभव करते रहते हैं ॥३०॥

इत्थमेव नृपाधीश दक्षिणायनकेश्वरः ॥
नन्दनाख्य पुरेणात्र योगधीरः प्रमाणवित् ॥३१॥

हे राज राजेश्वर! इस प्रकार की व्यवस्था में दक्षिण दिशा नन्दन नाम की नगरीके एक योगधीर नामक राजा प्रमाणित हैं ॥३१॥

रामेवात्सल्य वृत्योपि तस्यपत्नीतथाविधा ॥
नाम्ना सा रत्नं कान्तिस्स्या त्पति सेवा परायणा ॥३२॥

जो श्रीरामजी में वात्सल्य भाव रखते हैं उसी प्रकार उनकी पत्नी रत्नकान्ति भी पति सेवा परायण श्रीरामजी में वात्सल्य भाव रखती हैं ॥३२॥

तस्यां पुत्री त्रयं राज्ञस्तास्तिश्रः कौशलेश्वर ॥
श्रीरामेभावसिद्धाश्च वहु जन्मातरैरपि ॥३३॥

इन्हीं योगधीर की अपनी पत्नी से तीन कन्यायें हैं जो श्रीरामजी में कई जन्मों से भावमें सिद्ध हुई हैं ॥३३॥

नाम्ना त्वेका सुकान्तिस्तु तिश्रृणां श्रेष्ट भावगा ॥
तया रामस्यात्मभक्त्या वशी कारेण मानसम् ॥३४॥

उन तीनों में से एक सुकान्ति नाम की श्रेष्ठ भाव वाली है उसने अपनी आत्म भक्ति से श्रीराम जी को वश में कर लिया है ॥३४॥

हृतं स्वाभाविक शिनग्धविरहातुरया किल ॥
चिन्ता माकुरु राजेन्द्र विकारो नान्य विद्यते ॥३५॥

हे राजेन्द्र उस विरह व्यथित कन्या ने सहज सनेही श्रीरामजी का हृदय हरण कर लिया है और कोई विकार नहीं है आप चिन्ता न करें ॥३४॥

तराज पुत्र्यः सर्वाश्च स्वात्मसाधन सञ्चयैः ॥
प्रापयिष्यन्ति श्रीरामं नात्र सन्दिग्धता नृप ॥३६॥

हे राजन वे सब राजकन्यायें अपने आत्म-साधन सञ्चय से श्रीरामजी को प्राप्त करेंगी इसमें कोई सन्देह नहीं है ॥३६॥

एवं श्रुत्वा वशिष्टस्य वाक्यानितु नरेश्वरः ॥
तोषं लब्धा पुनस्तस्यो पाये प्रश्नश्चकार सः ॥३७॥

इस प्रकार श्रीबसिष्ठ जी के बचन को सुनकर महाराज श्रीचक्रवर्ति जी सन्तुष्ट हुए और उन कन्याओं के प्राप्ति का उपाय पूछे ॥३७॥

राजोवाच-त्वम्भिज्ञोसि समर्थोसि विधाने तु विधातृ वत्॥
अतः प्रच्छामि वितेन्द्र भविष्यन्ति कथङ्कदा ॥३८॥

हे गुरुदेव ! आप हर एक विधानों के सम्हालने में विधाता की तरह से विज्ञ हैं अतः हे विपेन्द्र ! वे राजकन्यायें कब, कैसे प्राप्त होंगी ? इसलिए ऐसा पूछ रहा हूँ ॥३८॥

माम्प्रयोजय मद्योग्य मन्येषा मपि सर्वथा ॥
ये नाथ राम आत्मान मवेक्षण मवाप्नुयात् ॥३९॥

जो मेरे योग्य हो, अथवा अन्य किसी के योग्य हो, आप मुझे प्रेरणा करें। हे नाथ ! जिससे श्रीराम जी अपने मन की चिन्ता से निवृत्त होकर होश को प्राप्त होवें ॥३९॥

वशिष्टोवाच-भविष्यं यन्निमित्तं तद्धि नोपायंभविष्यति ॥
विधिना रचितं राजं स्तत्रचिन्तात्तु नोचिता ॥४०॥

श्रीबसिष्ठ जी बोले कि हे राजन विधाता से रचित जो भी भविष्य विधान है वह बिना उपाय का ही सिद्ध हो जायगा उस विषयमें चिन्ता करना उचित नहीहै॥४०॥

इत्थंहि मुनिना देवि वशिष्टेन नराधिपः ॥
भविष्य कथनेनैवपूर्वमेव सुसाधितः ॥४१॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि हे पार्वती ! इस प्रकार श्रीबसिष्ठ जी ने महाराज दशरथ जी से पहले से ही भविष्य कथा कह रक्खी थी ॥४१॥

अतः समागतं विप्र मविचार्य्य समादृतः ॥
तध्दस्तात्पत्रिकांशीघ्र मादायमुदमा ययौ ॥४२॥

इसलिए योगधीर के भेजे हुए ब्राह्मण आने पर बिना ही बिचारे सम्यक प्रकार आदर किया, उनके हाथ से शीघ्र पत्रिका लेकर बड़े प्रसन्न हुए ॥४२॥

पुनः सुमन्त माहूय वाचयित्वा सुपत्रिकाम् ॥
मन्त्रं कृत्वा पुन विप्रः प्रेपितश्चाति सादरात् ॥४३॥

फिर सुमंत्र जी को बुलाकर पत्रिका पढ़वायी, आपस में बैठकर विचार किया फिर ब्राह्मण को आदर पूर्वक बिदा किया ॥४३॥

तदाप्रभृति श्रीरामो स्वात्मान स्मृतिमाययौ ॥
सखीभिर्मैथिली मोदं सम्प्राप्ता भक्त वत्सला ॥४४॥

तब से श्रीराम जी होश में आये, सखियों के सहित भक्तवत्सला श्रीमैथिली जी प्रसन्न हुईं ॥४४॥

पुनः श्रीकौशलेन्द्रेणमण्डलीका नराधिपाः ॥
निमन्त्रिता हर्षिता श्च तेपिसर्वेसमागताः ॥४५॥

इसके बाद महाराज कोशलेन्द्र जी ने अपने माण्डलिक राजाओं को आमन्त्रित किया, वे सब के सब भी बड़े हर्ष से आये ॥४५॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां श्रीदशरथ प्रवोधोनाम अष्टचत्वारिंशत्तमः सर्गः ॥४८॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां श्रीदशरथ प्रवोधो नाम अष्ट चत्वारिंशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥४८॥

श्रीशिव उवाच–अनन्तरं सुमन्तेनमंतृणातु नृपाज्ञया ॥
सज्जना वरजानस्य कृत्तिमैः कृत सञ्चयैः ॥१॥

श्रीशङ्करजी बोले कि हे पार्वती ! इसके बाद चक्रवर्ति महाराजकी आज्ञासे श्रीसुमंत्रजीने विविध प्रकार के कृत्रिय सञ्चयों से बारात को सजाया ॥१॥

कृतादिनद्वयेनैव रथेभाश्वैः सुभूषितैः ॥
ततो दृष्ट्वा महाराजोमुद मङ्गल माययौ ॥२॥

दो ही दिन के अन्दर हाथी घोड़ाओंके रथ आदि सवारियां सुन्दर भूषणों से भूषित कीं । सारी सजावट को देखकर महाराज मङ्गल को प्राप्त हुए ॥२॥

दुन्दुभीनाञ्च भेरीणां पणवानाञ्च नादितैः ॥
नादितैः गंज घण्टानां गजसंघट्ट गर्जितैः ॥३॥

दुन्दुभी, भेरी, पणव आदि बाजाओंके नाद से तथा गजघण्टा हाथी घोड़ा समूह गर्जनासे ॥३॥

हयानां खुर शब्दैश्चपाद कङ्कण संयुतैः ॥
रथानांकिङ्कणी नादैः प्रतिहारोच शब्दकैः ॥४॥

तथा घोड़ाओं की किंङ्कणी सहित टाप की आवाज, रथों के किङ्किणी की आवाज, प्रतिहारियों की ऊँची आवाज से ॥४॥

अन्येषाञ्च मनुष्याणाम्परस्पर श्चभाषणैः ॥
दिगन्त मूर्च्छिते घोषेप्रस्थितं वरजानकम् ॥५॥

अन्य मनुष्यों के परस्पर भाषण से इस प्रकार बरात की सामूहिक आवाज से दिशायें मूर्छित हो रही हैं ॥५॥

वशिष्टोपि सुमन्तश्च भ्रातृभिस्सखिभि र्युतम् ॥
बहूभिर्राजभिस्सेव्यं बहुभूषण भूषितम् ॥६॥

श्रीबसिष्ठ जी, श्रीसुमंत्र जी तथा सब भ्राता सखा संयुक्त भूषणों से भूषित बहुत राजओं के समूह से सेवित हैं ॥६॥

भूषिताश्च समारूढ़म्प्रसन्नास्य मनोहरम् ॥
शोभते राम मादाय वरजानेपि ते बचः ॥७॥

बारात में जाने के उत्साह से प्रसन्न मन हैं इस प्रकार शोभित बारात श्रीरामजी को लेकर गये ॥७॥

एवश्चलतिरामस्य वरजाने वलोद्धते ॥
समुद्राः क्षोभमापन्ना रेणुतांमार्ग पर्वताः ॥८॥

बल में बढ़ी हुई इस प्रकार श्रीराम जी की बारात के चलने पर समुद्र क्षुभित हो गये, धूल से मार्ग और पर्वत ढक गये ॥८॥

शेषस्य शिरसोभूमि श्चलिता कम्पितस्य वै ॥
स्तम्भमाना वायवश्च रेणुभिः पूरितादिशः ॥६॥

कम्पित हुये शेष जी के सिर की भूमि चञ्चल हो गयी। दशों दिशाओं में भरे रेणु से वायु स्तम्भित हो गया। (इस प्रकार श्री अयोध्या जी से बरात चली) ॥६॥

अत्र राजा योगधीरो नन्दनाख्य पुरेश्वरः ॥
चिन्तया चिन्तय न्नास्तेप्रेषितागमनं गुरोः ॥१०॥

अब उधर नन्दन पुरी में नन्दन पुरी के ईश्वर राजा योगधीर जी भेजे हुए श्रीगुरू जी के विषय में चिन्तित थे ॥१०॥

तावत्तंश्च समायान्तं ददर्शनृपतिर्मुनिम् ॥
प्रसन्न वदनं तेन कार्य्यं सिद्धिः परीक्षता ॥११॥

तब तक मुनि महाराज को आते हुये प्रसन्न वदन [मुख] देखकर महाराज योगधीर जी ने लक्षणों से ही कार्यसिद्धि की परीक्षा की ॥११॥

पुनः संस्पृश्य तत्पादौ कृत्वाचार्घादिकम्विधिम् ॥
आशने काञ्चनेस्थाप्य प्रेम्णा विप्रः समर्चितः ॥१२॥

अर्घ्यादिक बिधि से गुरू महाराज के दोनों चरण स्पर्श करके फिर स्वर्ण सिंहासन पर बैठाये प्रेम से ब्राह्मण जी का पूजन किया ॥१२॥

राजोवाच—कथ्यतां कुशलन्देव सर्वांगेन समन्ततः ॥
श्रीमत्कौशल नाथस्य मयिचानुग्रहो यथा ॥१३॥

महाराज बोले हे गुरुदेव ! सर्वाङ्ग से चारों तरफ से कुशल को कहिये और श्रीमत्कौशलनाथ जी के मेरे ऊपर अनुग्रहको भी जैसा हो तैसा कहिये ॥१३॥

यन्नामस्मरणा त्प्रात र्नराणां कुशलम्भवेत् ॥
तस्यकिं कुशल म्प्रच्छा परन्तुलोक सम्मतः ॥१४॥

जिनके प्रातः स्मरण से नरों को कुशल प्राप्त होती है उनके लिए क्या कुशल पूछूं परन्तु लोक-रीति से पूछना उचित है ।१४॥

मुनि रुवाच–सर्वांगेन समन्ताच्च कुशलः कौशलेश्वरः ॥
त्वयि चानुग्रहो त्यन्तो नान्यथा वचनंहि मे ॥१५॥

मुनि महाराज बोले सर्वाङ्ग से चारों तरफ से कुशल है महाराज कोशलेन्द्रजी का आपमें अत्यन्त अनुग्रह है मेरा वचन अन्यथा नहीं है ॥१५॥

तस्येयं पत्रिकाराज न्सर्वदा सत्य वादिनः ।
आशीर्वाक् च वशिष्ठस्य त्वयि चोक्तस्तु साम्प्रति ॥१६॥

हे राजन सर्वदा सत्य बोलने वाले उन महाराज की यह पत्रिका है और श्रीवसिष्ठ जी ने आपके लिए आशीर्वाद कहा है ॥१६॥

आश्लेषणं सुमन्तेन महामात्येन तस्यवै ॥
उक्तश्च परया प्रीत्या ह्येतत्सर्वं प्रगृह्यताम् ॥१७॥

उन महाराज प्रधान मन्त्री श्री सुमन्त्र जी ने आपको आलिंगन कहा है इस प्रकार प्रेममयी समाचार को आप ग्रहण करें ॥१७॥

शिव उवाच–एवं श्रुत्वायोग धीरो वाचिकं हृदय ङ्गमम् ॥
ब्रह्मानन्दश्चा नुभवन्नागतम्वचनम्मुखे ॥१८॥

श्रीशिव जी बोले कि इस प्रकार हृदयेंगम इन शब्दों को सुनकर राजा योगधीर ब्रह्मानन्द का अनुभव करने लगे, मुख से वचन नहीं आया ॥१८॥

क्षणेनधैर्य्यमाधाय स्वात्मभाग्यं प्रशंश्यच ॥
उन्मितं हृदये श्रीमदगस्त्यस्य कृपाफलम् ॥१९॥

एक क्षण में धैर्य को धारण कर अपने आत्म भाग्य की प्रशंसा करने लगे और पूर्व जन्म के गुरु श्री अगस्त्य जी की कृपा का फल हृदय से अनुमान करने लगे ॥१९॥

पुनस्तोत्रेण संस्तर्प्य कोशलादागतङ्गुरुम् ॥
नारीणाम्मङ्गलैर्गानै रुद्वाहोत्सव मादधत ॥२०॥

उसके बाद कौशलपुरी से आए हुए गुरू महाराज को स्तुति से सन्तुष्ट करके नारियों के मङ्गल गान से विवाह का उत्सव किया ॥२०॥

श्रुत्वा पुरजनाः सर्वे नार्य्यश्चैव प्रतिगृहम् ॥
चकारोद्वाह गानेनमहामङ्गल मुत्सवम् ॥२१॥

यह समाचार सुनकर नन्दनपुरी में सब जनता के घर प्रत्येक नारियां विवाह के गान मङ्गलोत्सव को करने लगीं ॥२१॥

राज्ञाप्रधान माहूयमहाकार्य्ये प्रवतितः ॥
सद्य प्रासादका स्सर्वे तोरणादि सुमण्डिताः ॥२२॥

श्री योगधीर जो ने प्रधान मन्त्री को बुलाकर तोरण कलशादि से नगर महलों को शीघ्र भूषित किया ॥२२॥

चतु र्दिक्षु पुरस्यान्त मुपचारै र्नवैस्तथा ॥
रमणीयं कृतं सर्वम्मनो नेत्रहरम्परम् ॥२३॥

नगर के चारों तरफ नवीन उपचारों से सबके मन और नेत्रों को हरण करने वाली रमणीय सजावट की ॥२३॥

वरजाननिवाशाय स्वर्ण सूत्रांशुका गृहाः ॥
पुरस्यच वहि र्देशे पञ्च क्रोशेषु रोपिताः । २४॥

वरातियों के निवास के लिये नगर से पांच कोश बाहर में स्वर्ण सूत्र निर्मित वस्त्रों से विशाल महल बनवाये गये हैं ॥२४॥

बृहज्जवनिकाभिस्तु प्राकारै स्सप्त भिर्वृताः ॥
ध्वजैश्च तोरणै र्दिव्यैः कलशैश्च परिस्कृताः ॥२५॥

जिनमें सात परकोटा, बहुत बड़ी कनात बनी हुई तथा ध्वज, पताक, तोरण कलशादि से सजे बहुत बड़े सुन्दर महल बनाये गये ॥२५॥

सज्जा स्तरणादिभिश्च पानभोग सुगन्धिभिः ॥
विचक्षणै स्सेवकैश्च संयुतास्तु समन्ततः॥२६॥

शय्या, बिछावन पान भोग की सामग्री सुगन्धि आदिक इन सब वस्तुओं को उचित रूप में सेवा के लिए देने वाले अलग २ सबके बड़े बुद्धिमान सेवकों सहित वे महल सुखभोग सम्पत्ति से परिपूर्ण हैं ॥२६॥

तावच्छुभदिने देवि पुरतः पञ्च क्रोशतः ॥
समायातम्वरजानं श्रुत्वा नृपो मुदं ययौ ॥२७॥
उपायनं मन्त्रिभिश्च प्रेषितम्वहुरत्नकम् ॥
घृत पक्वान्न मिष्टान्न म्वाहनानि वहूनिच ॥२८॥

हे पार्वती ! तब तक नगर से बाहर पांच कोश की दूरी पर बरात आगई है यह सुनकर राजा योगधीर आनन्द मग्न हो गये । बहुत रत्नों से युक्त तथा घृत की पकी मिठाइयों की कांवर तथा अनेक प्रकार की सवारी आदि भेट सामग्रियों को लेके प्रधान मन्त्री को भेजा ॥२७-२८॥

विचार्य्यति सुलग्नञ्च समानेतु म्महोत्सवैः ॥
वरजानं प्रधानेन सज्जना वहुशः कृताः ॥२९॥

सुन्दर लग्न विचार करके महान् उत्सव पूर्वक वरात को लाने के लिये प्रधान मन्त्री के साथ बहुत से सज्जन लोग भी गये ॥२९॥

अश्वेभाश्च रथानन्ता दिव्यालङ्कार भूषिताः ॥
तथैव सुखयानानि भूषितानि सुभूषणैः ॥३०॥

घोड़ों के रथ, हाथियों के रथ दिव्य अलंकारों से भूषित इसी प्रकार सुख पाल भूषित सेवकों द्वारा सजे हुये भेजे गये ॥३०॥

भूषणाढ्याः किशोराश्च सुन्दराङ्गा स्सुधन्विनः ॥
अश्वारूढागजारूढ़ा रथारूढाश्च केचनः ॥३१॥

बहुत से राजकुमार किशोरावस्था सुन्दर अङ्ग भूषणों से सजे धनुष बाण कसे घोड़ाओं पर हाथियों पर और रथों पर सवार हुये तथा औरभी लोग अगवानी के लिए गये ॥३१॥

मिलित्वा सत्समावृत्ता वादित्राग्राति शोभनाः ॥
कौतुकाग्राविरा जन्ते श्रीराम दर्शनोत्सुकाः ॥३२॥

आगे २ बाजा, अनेक प्रकारके कौतुक सजे हुए पीछेसे ये सब राजकुमारादि श्रीरामजी के दर्शन उत्साह से उमग कर गये ॥३२॥

वंश दीपा ह्यनन्ताश्च प्रदीपानाश्च पंक्तयः ॥
उद्वृत्त्याश्चैव दीपानां कृत्तिमा वाटिकासुच ॥३३॥

अगल बगल दोनों तरफ अनन्त वंश-दीपक, दीप-वृत्तों की पंक्तियां और सादे दीपकों की पंक्तियां तथा कृत्रिम वाटिकायें ॥३३॥

वहुशोप्याकाशदीपाः पक्षिणा न्तुण्ड ग्राहिताः ॥
नर्तकीनाश्चिमानानि शोभन्ते चाग्रगानितु ॥३४॥

बहुत से पक्षियों के तुण्ड [चौंच] द्वारा पकड़े हुए आकाश दीप और नृत्य करने वाली अप्स-राओं के विमान ये सब अगवानी के आगे में सुन्दर शोभित हो रहे हैं ॥३४॥

विदूषकाश्च वहुशः कृता कल्पा श्च शोभनाः ॥
दर्शका विस्मयं यान्तिपुन र्ज्ञात्वा हशन्तिच ॥३५॥
एवं सर्वे समाजैस्तु पुरतो वहिरागताः ॥
पुनस्सर्वे मिलित्वाच कोशार्द्ध मग्रमाययुः ॥३६॥

अनेक प्रकार किस कल्पनाओंसे शोभित विदूषक बहुत हैं जो आश्चर्य पैदा करने वाले कौतुकों करने वाले खेलों से सबको हँसाते हैं इस प्रकार अगवानी बरात सज करके नगर से मिलकर आधा कोश पर्यन्त बाहर आये ॥३५-३६॥

दृष्ट्वा ततो वर जानम्मुदश्च विस्मयङ्गताः ॥
परस्पर म्वाहनाद्धि प्रणम्य प्रीतिमाययुः ॥३७॥

दूर से बारात को देखकर आनन्दित चकित हुए परस्पर वाहनों को मिलाकर प्रणाम किये, प्रेम में भर गए ॥३७॥

मुख्यायेत्र प्रधानादि वाहनादवतीर्य्यच ॥
वशिष्टन्तु सरामश्च प्रणम्य पाद मास्पृशत् ॥३८॥

अगवानी में जो प्रधान मन्त्री आदि मुख्य थे वे अपनी सवारियों से उतर कर श्री वसिष्ठ जी को चरणस्पर्श करके प्रणाम किए ॥३८॥

आश्लेषणंसुमन्तेन कृतश्च प्रेम संयुतम् ॥
यथोचितंसमागम्य निवाश न्दर्शितुम्पुनः ॥३६॥

श्री सुमंत्र जी ने प्रधान मन्त्री का आलिंगन किया। यथोचित समागम करके जनवासा दिखाए ॥३६॥

वरजान जना याव दृष्ट्वा वाशम्मनोहरम् ॥
गत श्रमाः सुखम्प्राप्ता रामोपि सुख माप्नुयात् ॥४०॥

बरातियों ने मनोहर जनवासा को देखा। सब परिश्रम से मुक्त होकर सुख प्राप्त किये। इस प्रकार श्रीराम जी भी बड़े सुखी हुये ॥४०॥

ततः स्वयं योगधीरो ब्राह्मणै स्साधुभिस्तथा ॥
अन्येश्च मण्डलाधीशै रमात्यैः परिवारितः ॥४१॥

उसके बाद बहुत से ब्राह्मणों से घिरे तथा माण्डलिक राजाओं से और मन्त्रियों से घिरे राजा योगधीर ॥४१॥

वरजान निवाशेच समागत्य मुदान्वितः ॥
प्रथमं श्रीवशिष्ठम्वै प्रणम्य निर्भरम्मुदा ॥४२॥

जनवासे में आये। आनन्द मग्न होकर प्रथम श्रीवसिष्ठ जी को प्रणाम किये ॥४२॥

पतितोदण्डवद्भूमौ मुनिनोत्थाय श्लेषितः ॥
ततः परम्सुमन्तेन श्लेषितः प्रीति संयुतः ॥४३॥

पृथ्वी में साष्टांग दण्डवत करते हुए पड़े हुये राजा को श्रीवसिष्ठ जी ने उठाया गले से लगाया उसके बाद सुमंत्र जी ने भी प्रेम से आलिंगन किया ॥४३॥

पुनः सर्वान्यथायोग्यम प्रणामं श्लेषणङ्कृतम् ॥
श्रीरामेणैव श्वसुरो भ्रातृयुक्तेन सादरात् ॥४४॥

फिर यथा योग्य सबको प्रणाम और आलिंगन किया श्रीरामजी ने भी भ्राताओं के सहित आदर पूर्वक अपने श्वसुर को ॥४४॥

प्रेम्णा प्रणमितस्सोपि दृष्ट्वा वैदेहताङ्गतः ॥
कुतः कोहश्च कुत्रस्थ एवमात्मान मध्रुवम् ॥४५॥

प्रेम से प्रणाम किया इस प्रकार श्रीरामजी को देखकर राजा योगधीर मैं कौन हूँ ? कहां पर हूँ ? किधर से आया हूँ ? इस प्रकार अपनी आत्मा को भूलकर विदेह दशा को प्राप्त हो गये ॥४५॥

मुहूर्तमात्रमासीत्स श्रीरामेणावलम्बितः ।
मुनिनाहि वशिष्टेन सन्मुखं स्वाशने शुभे ॥४६॥

इस प्रकार एक मुहूर्त श्रीराम जी से अवलम्बित होकर विदेह रहे फिर मुनि श्रीवसिष्ठ जी ने सन्मुख सुन्दर आसन पर ॥४६॥

संस्थाप्य कुशलम्प्रश्न म्पृच्छाप्रेम्णा प्रचारितो ॥
राजोवाच-आजन्मत स्त्वद्य नाथ भवतां दर्शनेनवै ॥४७॥

बैठ कर प्रेम से कुशल प्रश्न किया। राजा बोले हे नाथ! जीवन भर में आपके दर्शनको चाहा ॥४७॥

सत्यं हि कुशलम्प्राप्त आन्यथा कुशलंकुतः ॥
नाहमेत द्वैभवाय योग्यो नाथ स्वसाधनैः ॥४८॥

अब मेरी लोक परलोक दोनों कुशल सत्य होगयी अन्यथा मेरे लिये कुशल कहां थी? अपने साधन से मैं इस वैभव के योग्य नहीं था ॥४८॥

परन्तु भवतां रीतिः कृपायास्तु विलक्षणा ॥
महाराजः कौशलेन्द्र श्चक्रवर्ति शिरोमणिः ॥४६॥

परन्तु आप बड़े लोगों की कृपा की रीति बड़ी विलक्षण है। कहां तो महाराज श्रीकोशलेन्द्र चक्रवर्ति शिरोमणि ॥४६॥

रविवन्शरविस्सोहं खद्योत इव पश्यताम् ॥
तेनाहं यत्समानीत स्तत्तु स्वार्य्यस्वभावतः ।५०॥

जोकि सूर्य वंश में साक्षात् सूर्य के समान हैं उनके सामने मैं सबके देखने के लिए जुगुनू के समान हूँ इस प्रकार मेरे को उन्होंने समानता से अपनाया यह बड़े लागों का स्वभाव है ॥५०॥

तृणानिशिरसाधत्तेगिरि स्स्वात्माश्रयानिच ॥
एवमुक्तवतं स्वात्म लघुत्वं नन्दनेश्वरम् ॥५१॥

क्योंकि पर्वत अपने आश्रित तृण को सिर पर रखता है इस प्रकार अपनी आत्मा को कार्पण्यता से छोटा करते हुये नन्दनपुरी के राजा योगवीर को ॥५१॥

तम्प्रशस्य वशिष्टोवै दर्शयं विगता न्निशाम् ।
गम्यता म्मन्दिर म्राज न्कर्तव्यम्पुनरात्मना ॥५२॥

श्रीवसिष्ठ जी ने प्रशंसा की और रात्रि का बहुत बीतना दिखाया राजन आप अपने महल में जांय ॥५२॥

त्वयापिचमहत्कार्य्यं म्विवाहस्य नरेश्वर ॥
ततोनिधाय हृदये श्रीराम म्मोहनेक्षणम् ॥५३॥

क्योंकि आपको इस विवाह के विषय में बहुत काम करना है। इस प्रकार वसिष्ठ जी के कहने पर मन मोहिनो कटाक्ष वाले श्रीरामजी को हृदय में धारण करके ॥५३॥

संस्पृश्य मुने श्चरणौ सुमन्तेन परस्परम् ॥
सभ्यान्सर्वान्यथाकारंकृत्प्रणामो नरेश्वरः ॥५४॥

श्रीवसिष्ठ जी के चरणों को स्पर्श करके श्रीसुमंत्रजी द्वारा परस्पर आलिंगन पाकर तथा सभी सभ्यजनों को यथा योग्य प्रणाम करके ॥५४॥

योगधीरो जगामात्म मन्दिरम्समहोत्सवम् ॥
दूराद्व हिस्थितस्यापि शौन्दर्य्य चरितन्तदा ॥५५॥

राजा योगधीर अपने महल में गये जहां महान उत्सव हो रहा था और दूर से ही अद्भुत शौन्दर्य चरित्र दीख रहा था ॥५५॥

रामस्यपुर वालानाम्विकुर्वन्ति मनोभ्दुतम् ॥
नायके प्रतिकूलाना म्मुग्धानामप्यभीकृते ॥५६॥
सुखमा रामचन्द्रस्य दूत्याश्चातुर्य्यकङ्गता ॥
राज्ञस्तु योग धीरस्य राज्ञा सम्भाषणेन वै ॥५७॥

नगर की बालिकायें श्रीराम जी के मन प्रसन्नकारक अद्भुत कौतुक करती हैं जो दूतियों द्वारा श्रीरामजी की परमा शोभा अनुभव करने वाली बड़ी चतुरता पूर्वक प्रतिकूल नायक में मुग्ध हैं महाराज योगधीर रानी के साथ बात करते हुए में ॥५६--५७॥

समस्त विगता रात्रिः रामरूप स्वभाग्ययोः ॥
पुनश्च प्रात रूत्थाय कृत्वा स्नानादि सत्क्रियाम् ॥५८॥

रात बीत गयी : श्रीरामजी का रूप और अपने भाग्य की प्रशंसा करते हुए प्रातःकाल उठे, स्नानादिक सत्क्रियाओं को किया ॥५८॥

वरजान निवाशे स ह्यागतो मात्य वन्धुभिः ॥
पूर्वंकृत्वासुमन्तेन समागम न्नम स्तुतिः ॥५९॥

अपने मन्त्रियों और भाइयों के सहित जनवासे में आये। प्रथम श्री सुमन्त्र जी से समागम, नमस्कार, स्तुति करके ॥५९॥

तेन सममर्वशिष्टस्य मुनेः सन्निधमाययौ ॥
आदरेण वशिष्टेन मुनिनाग्रे निवेशितः ॥६०॥

श्री सुमन्त्र जी द्वारा मुनि श्रीवसिष्ठ जी के पास आये प्रणाम किये। श्रीवसिष्ठ जी ने आदर पूर्वक आगे बैठाया ॥६०॥

सप्रीत्या कृत्प्रणामोसौ योगधीरो जने श्वरः ॥
सभ्रात्रा रामचन्द्रेणातदोत्थाय नरेश्वरः ॥६१॥

प्रेमसे आशीर्वाद प्रणाम होकर राजा योगधीर जोनेभ्राताओंके सहित श्रीरामजीको जगाय॥६१॥

वन्दितः शिरसा प्रीत्या तेनाशिर्वाग्भिरर्श्चितः ॥
श्रीरामस्याति शौन्दर्य्यं दृष्ट्वा सोप्यनिमेषताम् ॥६२॥

श्रीराम जी ने भी प्रणाम किया, प्रेम से आशीर्वाद पाया। श्रीरामजी का अद्भुत शौन्दर्य देख कर निमेष रहित ॥६२॥

ययौराजा योगधीरो मोद सिन्धौवगाहितम् ॥
इत्थं सुख समाजेन राजा पुर जनैस्तथा ।६३॥

राजा योगधीर आनन्द समुद्र में मग्न होगये इस प्रकार अपने मन्त्री पुरजन समाज सहित राजा ॥६३॥

सभ्रात्रा परिवारैश्च नजानाति गतंदिनम् ॥
अजस्त्रन्तेतु नेत्राभ्याम्राम रूपामृतञ्जनाः ।६४॥

अपने भ्राता और परिवारोंके सहित ऐसे आनन्द मग्न हुएकि दिन कब गया पता नहीं लगता। एक रस श्रीराम जी के रूपामृत नेत्रों से पीते हुये ॥६४॥

पपुर्न लेभिरे तृप्ति म्पीत्वा पीत्वा पुनः पुनः ॥
पुनश्च ज्योतिर्विद्भिस्मवै निर्णितं शुभ लग्नकम् ॥६५॥

तृप्त नहीं होते। बार २ पीते २ विभोर रहते हैं फिर सब ज्योतिषियों द्वारा शुभ लग्नका निर्णय होनेपर ॥६५॥

विवाहाय तु रामस्य सुकान्त्याः शुभदायकम् ॥
तद्दिने वर वेलायां योगधीरेण धीमता ॥६६॥

सुकान्ति के साथ अत्यन्त सुखदायक श्रीरामजीका विवाह हो इस प्रकार बुद्धिमान श्रीयोगधीर जी ने सुन्दर दिन और समय का निश्चय पाया ॥६६॥

रामः नर वरः श्रीमान्वरो नीतः स्व मन्दिरे ॥
रथ्यां रथ्यां पुरस्त्रीभि र्नीराजितः शुभेक्षणः ॥६७॥

देवताओं से भी अधिक सुन्दर श्रीमान राम जी को दुल्हा वेष में अपने मन्दिर के अन्दर ले जाते हुए गली २ नगर की स्त्रियों ने सुन्दर कटाक्ष पूर्वक आरती की ॥६७॥

श्वश्रूभिरर्चितो द्वारे मण्डपाङ्गण मागमत् ॥
राज्ञाश्रीयोगधीरेण श्रीरामपाद पङ्कजौ ॥६८॥

इस प्रकार द्वार में आने पर सासुओं ने पूजा किया। आँगके बीच मण्डप में लाईं। महाराज योगधीर जी ने श्रीराम जी के चरणकमलों को ॥६८॥

प्रीत्या प्रक्षयालितौ प्रेम्णा मण्डपे च निवेशितः ॥६९॥

प्रेम से धोए फिर बड़े प्रेम से मण्डप के भीतर प्रवेश कराया ॥६६॥

गानैश्च वाद्यैश्च सुवासिनीभिः परिस्कृताङ्गाति मनोहराङ्गा ॥
मात्रा समेता च तदा सुकान्ति र्नीतामहामण्डप मध्यभागे । ७०॥

और इधर माता ने भी सुहागिनी स्त्री तथा विवाहिता बेटियों द्वारा गान वाद्य मङ्गलकृत्य पूर्वक स्नान शृङ्गार आदि सत्कृत्यों से सजी हुई मनोहर अङ्ग वाली सुकान्ति को उस महामण्डपके मध्य भाग में लिवा लायीं ॥७०॥

प्रस्थापितासा गुरूणा तदा तु वरस्य रामस्यहि दक्षिणांगे ॥
कृत्वा विधानं विधिना समस्तं कन्या सुहस्तं वर हस्तकेवै॥७१॥

उपरोहित ने वेद के समस्त विधानों से दुल्हा श्रीराम जी के दक्षिण अंग (भाग) में कन्या को बैठाकर कन्या के हाथ को वर के हाथमें पकड़ा कर ॥७१॥

श्रीयोगधीरेण कुशंगृहीत्वा समर्पिता सा रघुराज पुत्रे ।
वामेकृता सा च वरस्य वामा हस्तग्रहो भू ज्जय शब्दकोच्चैः॥७२॥

श्री योगधीर जी ने कुशा को ग्रहण करके उस पुत्री को रघुराज कुमार के लिए समर्पित किया। इस प्रकार वर के वरण करने पर कन्या के वामभाग में बैठते ही पाणिग्रहण के समय ऊँचे स्वर से जय-ध्वनि हुई॥७२॥

कन्या त्रयं तत्पुनरेव तस्मिलग्ने प्रदत्तं रघुनन्दनाय ॥
ताभिश्च रामस्तिसृभिर्रराज महामनोज्ञे मणिमण्डपे च ।।७३॥

उसके बाद उसी लग्न में तीनों कन्याओं का श्रीरघुनाथ जी के लिए पाणिग्रहण प्रदान हुआ। उन तीनों कन्याओं के साथ श्रीरामजी वह महामनरमणीय मणि मण्डप में सुशोभित हुए ॥७३॥

तासां सुदायेतु नराधिपेनगावः सवत्साश्चित पुच्छ शृङ्गाः ॥
तथा महिष्यो वहुशः पयोदा स्त्वेकैक लक्षेन मिता प्रदत्ताः॥७४॥

उसके बाद उन कन्याओं को सुन्दर दामाद के लिए महाराज ने बछड़ों के साथ गौयें जो कि शृङ्ग और खुरों से सुन्दर सजे हुए हैं इसी प्रकार बहुत दूध देने वाली भैंसे भी एक २ लाख की संख्या में प्रदान कीं ॥७४॥

पात्राणि दिव्यानि सुवर्णकानि सौवर्ण सूत्राश्चित वस्त्र जातम् ॥
चतुर्विधङ्कञ्चुक धौतकाद्य मुष्णीषपाटाम्वर पादुका द्यम् ॥७५॥

दिव्य स्वर्ण के पात्र तथा स्वर्ण सूत्र निर्मित वस्त्र जो कि पाट, कृमि ऊन सूती भेद से चतुर्विध और भी वस्त्र पाग धोती चरण पादुका ये सब दिये ॥७५॥

सर्वाङ्ग नैपथ्य करण्ड कानि वहूनि दत्तानि नरेश्वरेण ॥
पत्राङ्ग रागाम्वर भूषणानि स्वादर्श सौगन्धिचकङ्कतीकाः॥७६॥

तथा और भी सर्वाङ्ग शृङ्गार करने की करण्डी महाराज ने बहुत दीं। पात्र, अंगराग, वस्त्र, भूषण, दर्पण सुगन्धित पदार्थ तथा कंघी आदिक ये सब वस्तुयें बहुत दीं ॥७६॥

युक्ताहयैः काञ्चन स्पन्दनाश्च विभूषितै स्सूत सुसेवकेश्च ॥
एवम्विधा नागरथाः प्रदीप्ता आरोहणार्थाश्च गजापराश्च॥७७॥

सुन्दर घोड़ों से नद्दे स्वर्ण रथ, सुन्दर भूषित सूत, और सेवकों के सहित दिये, इसी प्रकार हाथियों के रथ तथा दीप वृक्ष, ढोने वाले हाथी ये सब तथा और बहुत भी समान दिया ॥७७॥

प्रवालपाटीर विनिर्मितानि हेम्नश्च शय्याशन पीठकानि–
तथातपत्राणि च चामराणि सौवर्ण चित्रास्तरणानि चित्रैः॥७८॥

चन्दन की बनी हुई स्वर्ण सूत्र की, निवाड़ वाली मूंगा मणि जड़ी पर्यङ्क तथा स्वर्ण रत्नों के सिंहासन इसी प्रकार पात्र चँवर और स्वर्ण चित्रित बिछावन और भी अनेक गलीचे महाराज ने कन्या के दहेज में दिये ॥७८॥

अष्टापदाद्यन्तु सुक्रीडनार्थं यत्नैः कृतं कृत्तिम शोभनश्च ।
सूत्रात्मक म्विस्मयकार कश्च स्वाक्षेपविक्षेप करन्तु यच्च ॥७६॥

और सुन्दर यत्नों से रचे हुए पाशा चौपड़ खेलने के लिएदिए तथा कृत्रिम खिलौने जोकि सूत्रों से नृत्यादि विस्मयकारक करने वाले आक्षेप विक्षेप प्रसंगों को पैदा करने वाले ऐसे खिलौने दिये ॥७६॥

अहीभशुक्त्य ब्ध्यवनी प्रजाता नृपेण दत्ता मणयोप्यनन्ताः ।
नानामणीना म्मिश्रिताश्चहाराः विस्तस्यभाराः शकटेश्चनीताः।८०

सर्प, हाथी, सूक्तिका तथा पृथ्वी से पैदा होने वाले बहुत जाति के मणियों को भी और मिश्रित मणियों के तथा स्वर्ण के हारों के भार गाड़ियों को भर-भर करके महाराज ने दिया ॥८०॥

लक्षत्रयङ्किङ्कर किङ्करीणां दिव्याम्बराभूषणभूषितानाम् ।
तथा वयस्याः सुखयानकस्थाः समान शीला गुण रूप तोपि॥८१॥

तीन लाख दास दासी दिव्य वस्त्र भूषणों से भूषित अङ्ग इसी प्रकार बहुत सी सखियां जो कि सुकान्ति के समान शील गुण रूप वाली सुखपालों में बैठा करके सुकान्ति के लिए दिया ॥८१॥

सुगायका तोद्यकला सुदक्षाः सुचित्रकारादिक शिल्पिनोपि ।
तथापणाः सञ्चल सद्मकाश्च वस्त्रान्न वित्तादि समस्त वस्तुकाः॥८२

हावभाव कलाओं में बड़ी पण्डिता सुन्दर गाने वाली सखियों को तथा मान कराने और छुड़ाने की कला में कुशला चित्रकारी आदिक शिल्पी कला कुशला तथा चौपड़ खेल कला में कुशला ऐसी सखियों को और चलायमान महल तथा वस्त्रान्नादियुक्त बजार धन भी बहुत दिया ॥८२॥

अनश्वकोष्ट्रा बहुभारधाश्च गोस्कन्धजानानि तथा विधानि ॥
हस्त्यश्वपादातिरथैः समाङ्ग सैन्यश्च त्र्यक्षौहिणि सन्मितश्च ।८३।

खच्चर, ऊँट बैल आदि बहुत बोझा को ढोने वाले जानवरोंको तथा विविध प्रकारकी बैलगाड़ियां भी दिया। हाथी घोड़े, पैदल रथो—इस प्रकार चतुरङ्गिणी तीन अक्षौहिणी सेनाओं को भी दिया ॥८३॥

समर्प्य रामाय समस्तमेत त्पुत्र्याः प्रदाने शुभश्रध्दयाच ॥
बध्वाञ्जलिस्त्वात्मलघुत्व मुद्वह न्नुवाच राजा स बृहत्स भायाम्॥८४

इस प्रकार पुत्री के विवाह काल में समस्त वस्तुओं का श्रीरामजी के लिये समर्पण करके फिर कार्पण्यता पूर्वक हाथ जोड़ करके विशाल सभा के बीच राजा योगधीर जी बोले ॥८४॥

राजोवाच-श्रीराजराजेन्द्र कुमारराम नस्यात्समत्वं त्वयि मे कदाचित्।
अङ्गीकृतो यत्कृपया त्वयाह मुद्वाह कार्य्यन्तुभवेद्विशाम्ये ॥८५॥

कि हे राजेन्द्रकुमार श्रीरामजी मेरेमें आपको पूर्ण करनेकी समता बिल्कुल नहीं है। यहजो श्रीचक्रवर्ति जी महाराज से विवाह विधि पूर्वक सम्बन्ध हुआ है। यह केवल आपकी अहैतु की कृपा ने ही मुझे अंगीकार किया है ॥८५॥

शक्ति र्नमे राम तवार्च नार्हा किंपल्वलस्यार्णव माप्नुवन्तु ॥
खद्योतकैः किन्तु र वेः सहायम्मेरोः सहार्याङ्कमुरेणुभिस्स्यात् ॥८६॥

हे राम ! मेरे में आपकी पूजा कर सकने की कोई शक्ति नहीं है क्योंकि एक छोटी तलाई समुद्रको क्या पूरण कर सकेगी ? एक जुगुनू सूर्य को क्या प्रकाश की सहायता कर सकेगा ? एक रेणुका सुमेरु की क्या समता कर सकेगी ?॥८६॥

परन्तु त्वां तोर्षायतुश्च साधुभिः शुद्धैक भावः प्रकटी कृतः श्रुतौ॥
तेनैव त्वत्तोषण मावहाम्यह न्नदृश्यते तद्विरहे प्यलौकिके॥८७॥

परन्तु आपको सन्तुष्ट करने के लिये वेदों और महात्माओं ने केवल एक शुद्ध भाव को ही प्रकट किया है। मैं भी इसी से आपको सन्तुष्ट कर रहा हूँ इसके अतिरिक्त मेरे में कोई भी लौकिक साधन नहीं है ॥८७।

इत्थश्च राम श्वशुरेण दैन्यैः प्रतोषितोभावभृतौ सुवाक्यैः ॥
रामोपि तं वाक्कुसुमै स्सम्मर्च्य चकार गण्यंगुरुणां समाजे॥८८॥

इस प्रकार कार्पण्यता से भावमयी अमृत वाणियों से श्वसुर ने श्रीरामजी को सन्तुष्ट किया। श्रीरामजी ने भी अपने वचन रूपी पुष्पों से सम्यक पूजा किया गुरू महाराज ने भी सभा में अग्रगण्य प्रतिष्ठित किया ॥८८॥

वशिष्टश्च सुमन्तश्च श्रीमद्दशरथेण वै ॥
समम्मत्वा पूजितौ तौ योगधीरेण सक्रमैः॥८६॥

महाराज श्रीयोगधीर जी ने भी श्रीवसिष्ठ जी को और श्रीसुमन्त्र जी को श्रीमहाराज दशरथ जी के बराबर मान करके दोनों की क्रमशः पूजा किया ॥८६॥

अर्चयित्वा मण्डलीं तु वशिष्टादि महात्मनाम् ॥
याचिका वृत्तिका स्तोद्य वादकाश्चप्रतोषिताः ॥६०॥

उसके बाद बरात की समस्त मण्डलियों को तथा वसिष्ठ जी के बाद सब ऋषि महात्माओं को और याचक वृत्ति वाले भाट आदिको तथा बाजा वालों को भी सम्यक् प्रकार सन्तुष्ट किया ॥६०॥

गजाश्व रथ दानैश्च वस्त्र भूषण विस्तकैः ।
आदरो ज्वल सद्वाग्भि र्योगधीर महीक्षिता ॥६१॥

हाथी घोड़े रथ वस्त्र भूषण स्वर्ण सबको पर्याप्त दिया तथा आदरणीय शब्दों से भी सबको तृप्त किया ॥६१॥

ततः शभातु पुरुषाणाम्मण्डपाङ्गणतोवहिः ।
ययौ तत्र च नारीणां तरुणीनां समागता ॥६२॥
सर्वाश्च पुरवासिन्य स्तथा राजकुलाङ्गनाः ॥
समावृत्य स्थिता सर्वाः श्रीरामं मोहनेक्षणम् ॥६३॥

इस प्रकार सम्पूर्ण बराती समाज को मण्डप के अन्दर पूज करके फिर वह सभा तरुणी स्त्रियों के मङ्गल वैवाहिक गान पूर्वक मण्डप के आंगन से बाहर आई। पुर की स्त्रियायें तथा राजकुल की स्त्रियायें मन मोहिनी कटाक्ष वाले श्रीरामजी को घेर करके ॥६२-६३॥

निरीक्ष वरवेषं श्रीरामङ्कामाति सुन्दरम् ॥
वर्जनायात्मनौदृष्टे दोंष न्नार्य्यो विचक्षणाः ॥६४॥

काम से भी अधिक सुन्दर श्रीरामजी को दुल्हा वेष में देख करके दृष्टि दोष के डर से सूक्ष्म बुद्धि वाली स्त्रियां राई लोन उतारती हैं ॥६४॥

परिवार्य्यपरिवार्य्य मुक्तानाश्चान्य रत्नकाः ।
मालाश्चांशुक दिव्यानि क्षिपन्त्यानन्द निर्भराः ॥६५॥

तथा रत्न मुक्ताओं की मालाओं को और दिव्य वस्त्रोंको प्रेम आनन्द विभोर होकर न्यौछावर कर करके फेंक देती हैं ॥६५॥

गानं कुर्वन्ति सर्वास्ताः सम्बन्धो क्त्या कलस्वरैः॥
काचि त्कपोलं संस्पर्श्य ददात्यामोद वीटिकाम् ॥६६॥

और कोकिल कण्ठ से सबकी सब सम्बन्ध रीति के अनुसार गान करती हैं कोई स्त्रियें आनन्दमयी पान बीड़ा पवाती हुई कपोलों का स्पर्श करती हैं ॥६६॥

अर्घपाद्यादि विधिना वनिताभि र्नीराजानम् ॥
सर्वांगसुन्दरस्यास्य कृतम्वाद्य स्वरोध्दतैः ॥६७॥

फिर अर्घ्य पाद्यादि विधियों से सर्वाङ्ग सुन्दर श्याम श्रीरामजी की बाजाओं की ध्वनि ऊंचे स्वर से गान पूर्वक आरती करती हैं ॥६७॥

एवंकृत्वा सखीत्वेका प्रगल्भा राजवन्शजा ॥
मन्दस्मितोवाचरामं कटाक्षैश्चित्त कर्षयन् ॥६८॥

इस प्रकार आरती होने पर कोई सुन्दर प्रतिभा वाली राजवंशीय कन्या श्रीरामजी को कटाक्ष करके चित्त टुराती हुई मन्द मुस्क्या कर बोली ॥६८॥

राजपुत्राधुना त्वंहि लोकरीत्या सुखाय वै ॥
अस्माकं कुल देवीया तांसमच्चर्यभावतः ॥६६॥

हे राजकुमार ? एक हमारे कुल की देवी है आप लोक रीति के अनुसार सुख प्राप्ति के लिये उस देवी की भाव पूर्वक पूजा करें ॥६६॥

आगच्छात्र मयासार्ध्दं दर्शयामि गृहान्तरे ॥
एवमुक्त्वा वरो रामो वधूभिः पट ग्रन्थितः ॥१००॥

इस लिए आप मेरे साथ आइये मैं आपको उस देवी का दर्शन कराऊंगी—ऐसा कह कर वर-दुल्हिन परस्पर पट-ग्रन्थि बांध करके ॥१००॥

मण्डपादन्य गेहान्ते समानीतः स कौतुकम् ॥
यत्र चैका कुमारी तु हास्याययत्नतः शुभाः ॥१०१॥

मण्डप से अलग एक घर में लिवा लायी जहां पर बहुत सी कुमारिकाओं ने सुन्दर हास्यकारक बहुत से यत्नों की रचना कर रक्खी थी, वहां लिवा लायी ॥१०१॥

प्रकल्पिता महाकाली कज्जलांग विलेपनैः ॥
अच्चर्यस्वेति सर्वाभिः प्रेरितो रघुनन्दनः ॥१०२॥

उन कौतुकों में एक कज्जलसे परिलिप्त अङ्गवाली कुमारीको महाकाली रूपमें कल्पित कर रक्खा था सब सखियां मिल करके श्रीरघुनन्दन जू को इनकी पूजा कीजिये ऐसा कहकर प्रेरित किये ॥१०२॥

श्रीरामचन्द्र उवाच-यूयन्तु गच्छत वहि स्तदैकान्ते यथेच्छया ॥
मूत्ति मिमा मर्च्चयामी त्येवम्रामो ब्रवीद्धसन् ॥१०३॥

श्रीरामजी बोले कि आप सब बाहर चली जाओ मैं इन देवी जी को एकान्त में इच्छा पूर्वक पूजा करूंगा, इतना कहकर हंसते हुए श्रीरामजी को ॥१०३॥

कथमेवं राजपुत्र लज्जास्माकं तवोचिता ॥
समक्षंपूजय स्वात्म सुख वर्द्धन कारणम् ॥१०४॥

सब सखियां हे राजपुत्र ! हमसे आप इतनी लज्जा क्यों करते हैं यह उचित नहीं है। हम लोगों के सामने सबकी आत्मा को सुख देने के कारण इस पूजा को कीजिये ॥१०४॥

तदा विचक्षणे नैव रामेणाश्लिष्य द्वौ करौ ॥
उत्थापिता कल्पमाना नेवम्मैवम्ब्रु वत्यपि ॥१०५॥

ऐसा सबके कहने पर सूक्ष्म बुद्धि वाले श्रीरामजी उस देवी को दोनों हाथों से आलिंगन करके उठाने लगे। सखियां उस कल्पित देवी को उठाते देखकर नहीं २ ऐसा मत करो, इस प्रकार बोलीं ॥१०५

सात्विकेन स्तम्भमाना सम्पर्का त्पुरुषस्यसा ॥
प्लायितुश्च न शक्ताहि लज्जया धो मुखीस्थिता ॥१०६॥

श्रीरामजी के आलिगन करने पर पुरुष के सम्पर्क से स्तम्भ, कम्प आदिक सात्विक भाव उस कल्पित देवी अर्थात् वास्तविक सखी के अङ्ग में उत्पन्न हुए। वह लज्जा से नीचे को मुख की हुई भाग भी न सकी ॥१०६॥

इत्थं हास्यादि यद्रीतिङ्कृत्वा तु प्रमदागणैः ॥
वधूवरौ सपर्यंके स्वापितौ मण्डपायने ॥१०७॥

इस प्रकार हास्य की बहुत सी रीतियों द्वारा प्रमदा गणों ने वर-वधू को मण्डप के अन्दर पर्यङ्क पर शयन कराया ॥१०७॥

पुनः प्रभाते ताभिश्च श्नापितौ लालितै र्यथा ॥
कारितं भाजनं दिव्यैरसैः षड्भिः समन्वितम् ॥१०८॥

इस प्रकार रात बीतने पर प्रातःकाल ललित गान पूर्वक जगाये, स्नान आदिक कृत्य कराये, दिव्य षटरसों के पदार्थों का भोजन कराए ॥१०८॥

अत्यादरेण राज्ञातु वशिष्टश्च सुमन्तकम् ॥
आहूय गुरुणा साक्षा द्विनयाद्वहु वन्दनैः ॥१०६॥

उधर महाराज योगधीर जी ने अत्यन्त आदर पूर्वक श्रीवसिष्ठ जी सुमंत्र जी को गुरु महाराज द्वारा बुलाकर साक्षात् बिनय पूर्वक प्रणाम करके ॥१०६॥

स्वर्ण पीठे च संस्थाप्य कोमलास्तरणेशुभे ।
समस्तै र्वरजानस्य जनैरुत्तम मध्यमैः ॥११०॥

स्वर्ण सिंहासनों में कोमल सुन्दर बिछावनों में समस्त बरातीजनों के सहित उत्तम मध्यम उचित विभाग पूर्वक बैठा कर के ॥११०॥

सार्द्ध श्चाकारी सत्प्रेम्णा रसैः षड्भिश्चतुर्विधम् ।
भोजनं योगधीरेण वस्त्रादि दक्षिणोत्तरम् ॥१११॥

वड़े प्रेम से सब बरातियों को एक साथ षटरस चार प्रकार के भोजन को पवाकर बाद में श्री योगधीर जी ने वस्त्र दक्षिणादि दिया ॥१११॥

भोजनानन्तरं राज्ञा दिव्यागारे मनोहरे ॥
सुमन्तेन समं देवो वशिष्टः काञ्चनाशने ॥११२॥

इस प्रकार भोजन के बाद श्रीवसिष्ठजी और श्रीसुमन्त्रजी को एकान्त मनोहर दिव्य महल के अन्दर दो स्वर्ण सिंहासनों में साथ बैठाया ॥११२॥

प्रतिष्ठाप्य यथायोग्ये पूजितौ वस्त्रभूषणैः ॥
ताम्बूल वीटिकाभिश्च सभ्याश्चान्ये पिभावतः ॥११३॥

और यथा योग्य विधि से वस्त्र भूषण पान सुगन्धि आदिक पदार्थों द्वारा भाव पूर्वक पूजा की ॥११३॥

ततश्चान्ये जनाये च वरजाने समाहितः ॥
सेवकैः पूजिताः सर्वे ताम्बूलै र्वस्त्रभूषणैः ॥११४॥

इस प्रकार बरात में सभी जनोंको यथा योग्य विधि से सावधान सेवकों द्वारा वस्त्र भूषण पानादि से पूजा की ॥११४॥

अतः परं वरोरामो वधूभिश्च मनोहरः ॥
भूषयित्वा वशिष्टाग्रे समानीयसमर्पितः ॥११५॥

इसके बाद मनोहर मूर्ति दुल्हा श्रीरामजी को सब स्त्रियों ने भूषित करके वधुओं सहित लाकर श्रीवसिष्ठजी के आगे समर्पित किया ॥११५॥

तमादाय मुनीशस्तु सत शैन्यैः समन्वितः ॥
वाद्यानाञ्च महानादैः स्वनिवाशं समागमत् ॥११६॥

इस प्रकार श्रीरामजी को लेकर मुनीश्वर श्रीवसिष्ठ जी भी सेना के सहित गान बजान महानाद पूर्वक अपने निवास स्थान में आए ॥११६॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां शिवाशिवसम्वादे सुकान्त्या विवाहोनामैकोनपञ्चशत्तमः सर्गः ॥४६॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां सुकान्त्या विवाहो नामैकोन पञ्चाशत्तमः सर्गः शमाप्तः ॥४६॥

सार्द्धं दिनत्रयं राजा योगधीरः सुप्रीतिमान ॥
मार्गे तु वर जानेन ह्युषित्वापुर माविपत् ॥१॥

बड़े अनुरागी महाराज श्रीयोगधीर जी भी तीन दिन तक बरातियों के साथ पहुँचाने के लिये जाते हुए मार्ग में निवास किये उसके बाद अपनी नगरी में लौट आए ॥१॥

गच्छन्मार्गे वभौराम वर वेषो मनोहरः ॥
मार्गस्थ स्त्री पुरुषाणां वहुसैन्यैः समावृतः ॥२॥

दुल्हा बेश में अति मनोहर श्रीराम जी मार्ग में बहुत सेना बरातियों से घिरे हुए मार्गस्थ स्त्री पुरुषों के मनों को चुराते हुए जारहे हैं ॥२॥

योजन त्रयमेवासु लंघयित्वा दिनंप्रति ॥
रात्रौतु निवशन्नित्य माजगाम स्वयं पुरीम् ॥३॥

इस प्रकार तीन योजन रोज चलते हुए कुछ रात्रि रास्ते में ठहर कर श्रीअयोध्या पुरी में पहुँच गये ॥३॥

अथ शुभ दिने देवि श्रीरामः पितृ मन्दिरम् ॥
आज्ञापितो वशिष्टेन विवेश मातृमोददः ॥४॥

उसके बाद हे पार्वती ? श्रीरामजी सुन्दर दिन मुहूर्त में श्रीवसिष्ठजी की आज्ञासे माता पिताओं के महल में आनन्द देते हुए प्रवेश किये ॥४॥

श्वश्रूणांतु वधू सर्वाः पादौ संस्पृश्य मोदिताः ॥
सुवाक्यै स्तोषिता स्ताश्च श्वश्रुभिश्च मनोहरा ॥५॥

सब बधुओं ने सासुओं के चरणों को आनन्द मग्न होकर स्पर्श किया, सासुओं ने भी मनोहर बधुओं को सुन्दर बचनों से सन्तुष्ट किया ॥५॥

सीतायास्तु स्व स्वामिन्याः सुकान्ती चरण द्वयम् ॥
संस्पृशन्ती कुतः कस्मा द्विस्मृताः सर्वशः स्मृति ॥६॥

उसके बाद सुकान्ति ने अपनी स्वामिनी श्रीसीताजी के दोनों चरणकमलों को स्पर्श किया। मैं कौन हूँ ? कहां पर हूँ ? सब स्मरण भूल गयी ॥६॥

सीता सौशील्य हृदया ताम्वीक्ष प्रेम निर्भराम् ॥
सूत्थायानीय हृदये प्रीति वाग्भिः प्रतोषिता ॥७॥

सुन्दर सुशील हृदया श्रीसीताजी प्रेम वेदोश सुकान्ति को देखकर उठाकर हृदय से लगायी सुन्दर प्रेम भरी वाणी से सन्तुष्ट किया ॥७॥

अनीयभवने तत्र कनकाख्ये परार्द्धके ॥
निवाशाय रहस्यार्थं दत्तं दिव्यं सुमन्दिरम् ॥८॥

इस प्रकार विसकीमतीय रत्नों से निर्मित कनकभवन नामक अपने महल में लाकर रहने के लिए एकान्त सुन्दर दिव्य भवन दिया ॥८॥

सुकान्ति रुवाच—हेसीते जनकात्मजे रघुवर प्राणप्रिये श्रूयताम्॥
पादौ पद्म मनोहरौ भवति ते सन्मन्दिरम्मे सदा ॥
तद्वैदेहि प्रदेहि निश्चल धिया सद्भिश्च संसेवितम् ॥
नान्य मस्ति मान्तु सुखद स्त्वत्पादभिन्नं गृहम् ॥६॥

सुकान्ति बोली कि हे सीते ! हे जनक तनये ! हे रघुवर प्राणप्रिये ! सुनिये । कमल सदृश सुन्दर मनोहर आपके चरण ही मेरे हमेशा के लिए मन्दिर हैं । हे वैदेही ! निश्चल बुद्धि से सज्जनों द्वारा सुसेवित उन अपने चरणकमलों को ही मुझे सेवा के लिए दीजिये यही मेरी इच्छा है इसके अतिरिक्त महल मुझे सुखदायी नहीं हैं ॥६॥

या या मे हृदये मनोरथ तती दुर्घव्यमाना प्यसौ—
त्वत्पाद स्मरणा त्समस्तविधिना सम्पूजिता सत्फलैः॥
साक्षात्स्वामिनि तत्पदाब्ज युगलं सद्भक्तिभाव्यज्जनै—
र्दृष्टुं च्छामि नदृश्यतेति सुखदं लोकत्रये वस्तु तत् ॥१०॥

हे स्वामिनी जी मेरे हृदय में जो २ मनोरथ थे वे अघटित होने पर भी आपके चरण स्मरण से सम्यक् विधि से उत्तम फल प्राप्त होकर पूर्ण हुये । साक्षात् पवित्र भक्ति से भक्तों द्वारा भावित आपके जुगल चरणकमलों को ही मैं साक्षात् देखना चाहती हूँ । इन चरणों से अतिरिक्त मुझे तीनों लोक में कोई भी सुखदाई नहीं दीखता है ॥१०॥

श्रीशिव उवाच—यथार्थं वचस्तस्या प्रीतियुक्तं मनोहरम् ॥
श्रुत्वा त्वास्वास्य जानक्या ह्याश्लिष्य वाग्भिस्तोषिता ॥११॥

श्रीशङ्कर जी बोले कि हे पार्वती सुकान्ति के प्रेम से भरे यथार्थ मनोहर शब्दों को सुनकर श्री जानकी जी ने सुकान्ति को हृदय से लगाया । सुन्दर शब्दों से सन्तुष्ट किया ॥११॥

मुख्याः सख्यस्तु सीताया स्तासां म्मुख्यत्वमण्डले ।
स्थापिता चाभिषेकेन कृत्वा मङ्गल मुत्सवम् ॥१२॥

श्रीसीताजी की जो मुख्य सखियां हैं उनके भी मुख्यों के मण्डल में सुन्दर मङ्गल उत्सव पूर्वक यूथेश्वरी पद के आसन में अभिषेक करके बैठाया ॥१२॥

इति श्रीशङ्कर कृते श्रीअमररामायणे श्रीसीताराम रत्नमञ्जूषायां शिवाशिवसम्वादे सुकान्त्या मनोज्ञ प्रीति कथनो नाम पञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५०॥

इति श्रीमधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां सुकान्त्या मनोज्ञ प्रीति कथनो नाम पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥५०॥

श्रीशिवउवाच–एवं येरसिकाभक्ताः शृङ्गारभाव संश्रया ॥
सिद्ध काले प्राप्नुवन्ति जानक्याः कृपयान्विता ॥१॥

श्रीशिव जी बोले हे पार्वती ! श्रीरामजी के शृङ्गार भाव वाले रसिक भक्तों को सिद्ध काल में श्रीजानकी जी की कृपा से प्राप्ति होती है ॥१॥

अथातो योग धीरस्य पुरतो वामभागके ॥
देशो नाम्ना सैकलस्स्या द्राजा तत्र सुयोधनः ॥२॥

इसके बाद योगधीर जी की नगरी के बाम भाग में एक सैकल नामक देश है वहां राजा सुयोधन ॥२॥

भार्य्या स्तस्य महाभागा अष्टाविंशति सद्व्रताः ॥
भ्राता राज्ञोधवल्लाक्षः प्रीतिमाश्च सुयोधने ॥३॥

उनकी महाभाग शालिनी अट्ठाईस स्त्रियां थीं बड़ी पतिव्रतायें थीं उसी प्रकार सुयोधनके एक भाई धवलाक्ष नाम के थे जो सुयोधन में बड़ी प्रीति रखते थे ॥३॥

तस्यापि पत्नी सद्रूपा अष्टावेव गुणोत्तरा ॥
द्वे द्वे सुते च सर्वासु जाते तस्य महात्मनः ॥४॥

उनकी सुन्दर उत्तम गुण रूपवती आठ स्त्रियायें थीं उनसे महाराज धवलाक्ष जी के दो दो कन्यायें उत्पन्न हुईं ॥४॥

सुयोधनस्यया भार्य्यास्तत्राष्टासु त्रयं त्रयम् ॥
द्वयं द्वय श्चापरासु पुत्रीणां जातमद्भुतम् ॥५॥

राजा सुयोधनके आठ स्त्रियों से तो तीन २ कन्यायें उत्पन्न हुई अन्य सबसे दो २ कन्यायें उत्पन्न हुई जोकि सभी अद्‌भुत थीं ॥५॥

उपदेशा न्नारदस्य तासाञ्च पूर्व साधनैः ॥
विवाहिताः राघवाय सुदाय्यैगुण वत्तराः ॥६॥

श्रीनारद जी के उपदेश से तथा पूर्वजन्मों के साधनों से उत्तम दामाद श्रीरामजी के लिये ही इन सब उत्तम गुण वाली कन्याओंका विवाह हुआ ॥६॥

एतस्याग्रे महादेवि देशः कज्जल नामकः ॥
तत्रासी त्क्षत्रियो राजा नाम्ना तीव्रौजसोवली ॥७॥

हे पार्वती ! इस सैकल देश से आगे एक कज्जल नामक देश है वहां के राजा तीव्रौज नाम के बड़े बलवान थे ॥७॥

विल्वकाश्चपुरीतस्य सुप्रजाभिश्च संकुला ॥
दुर्गत्रय समावृत्ता रक्षितापि महाभटैः ॥८॥

उनकी नगरी का नाम विल्वकापुरी है जो उत्तम धार्मिक प्रजा से भरी है उस नगरी में प्रजा तीन परकोटाओं से सुरक्षित है फाटकों पर पहलवान रक्षा करते हैं ॥८॥

तस्यराज्ञस्तु पत्नीनां सहकम्मनोहरम् ॥
तासाञ्च कौतुक न्देवि श्रूयताम्यद्बभूवच ॥९॥

उन महाराज तीर्नौज की उत्तम मनोहर एक हजार स्त्रियायें थीं। हे पार्वती! उन सबके साथ एक अद्भुत कौतुक हुआ है सो सुनो ॥९॥

एकदा मिलिताः सर्वाः श्चातुम्प्रासाद वाटिकाम् ॥
तड़ाग मागता स्ताश्चसखी दासी परिवृताः ॥१०।

वे सब एक हजार स्त्रियायें मिल करके एक बार अपनी वाटिका के सरोवर में स्नान करने गयी थी। सरोवर के किनारे अपनी दासी सखियों से घिरी हुई ॥१०॥

जले प्रविश्य ताभिश्च कृता क्रीडा कुतूहलैः ॥
कौतूहलेन स्नात्वा वै विवस्त्रा स्तट माश्रिताः ॥११॥

इकट्ठे जल में प्रवेश किये। स्नान करते हुये उन्होंने बहुत क्रीड़ा कौतुक करने पर अङ्ग से विवस्त्रा होगयीं इसी प्रकार किनारे पर चली आयीं ॥११॥

ताः दृष्ट्वाच सुन्दराङ्गी मुह्यमानो दिवाकरः ॥
अवतीर्य्य महीं साक्षात्संस्पृश्य मुदमाययौ ॥१२॥

उन सुन्दर अङ्ग वालियों को देखकर सूर्य मोहित हो नर रूपसे साक्षात् पृथ्वीमें उतर करके उन सबका स्पर्श किया आनन्दित हुए ॥१२॥

प्रसन्नेन पुनःस्ताभ्यो वरो दत्तोति सौख्यदः ॥
रविरुवाच-भवत्यः श्रूयतांसर्वाः मम संस्पर्शक म्फलम्॥१३।

फिर प्रसन्न होकर उन सबके लिए एक सुखदायी वरदान दिए। रवि बोले कि आप सब सुन मेरे स्पर्श का फल ॥१३॥

यूयम्भविष्यथ प्राप्ते काले सुकृत मूर्तयः ॥
सुतास्तासाम्मातरोहि यशः कीर्त्ति सुखादिकाः ॥१४॥

आप लोग भविष्य में पुण्य की मूर्ति होकर फल प्राप्त करोगी। तुम्हारी पुण्य मूर्ति कन्यायें महान सुखदायी यश कीर्तिमती होंगी उनकी तुम माता होओगो ॥१४॥

एकैकस्याम्मम नाम्ना भविष्यन्ति सुतादश ॥
ताषाम्विवाहो योध्यायां रामचन्द्र मनोहरे ॥१५॥

आप सबमें एक २ से दस २ कन्यायें मेरे नाम से होंगी उन सबका विवाह श्रीअयोध्या में मनोहरमूर्ति श्रीरामचन्द्र जी के साथ ॥१५॥

भविष्यति मनोज्ञानां सत्यंसत्यं वचोमम ॥
एव मुक्त्वातु दिव्यानांमणीनां तेजसा वृतम् ॥१६॥

होगा। यह मेरा वचन तुम सत्य समझना। इस प्रकार उन मनरमणीया स्त्रियों के लिए वरदान देकर दिनमणि अपने तेज से प्रकाशमान होकर आकाश मार्ग से चल गये ॥१६॥

ताभ्यश्च दत्तवान्हारं खञ्जगाम दिवस्पतिः ॥
राजानम्प्रति ताभिश्च चरित्रञ्चि चमत्कृतम् ॥१७॥

उन सब स्त्रियों के लिए सुन्दर प्रकाशमान एक २ हार दे गये वे सब स्त्रियायें भी राजा के समक्ष आ करके उस चमत्कारमयी चरित्र को सब सुनाया ॥१७॥

कथित निश्छलत्वाद्धि कालोत्तर सुख प्रदम् ॥
एकान्तेच समाहूय नृपेण स विवेकिना ॥१८॥

भविष्य में सुख देनेवाली निश्छलता पूर्वक कही हुई उन स्त्रियोंकी बातों को सुनकर बड़े विवेकी राजा ने एकान्त में ॥१८॥

त्रिकालज्ञे गुरौसर्वंयभ्दूत न्तन्निवेदितम् ॥
तदाभूतम्भविष्येननिमित्त कथनेन वै ॥१९॥

अपने त्रिकालज्ञ गुरू को बुलाकर यह जो कुछ हुआ था सारा समाचार गुरु जी के लिये निवेदन किया। भविष्य के निमित्त यह जो कुछ भी हुआ था इसको राजा के कहने पर ॥१९॥

गुरुणा बोधितो राजा श्रुत्वासोपि सुखम्ययौ ॥
पुन र्वर्षेव्यतीतेच राज्ञी सुलग्नकेशुभे ॥२०॥

गुरू जी ने राजा को समझाया। राजा भी सुन समझकर सुख को प्राप्त होगये। एक वर्ष बीतने पर उन सब रानियों से सुन्दर सुलग्न में ॥२०॥

शुभयोगेग्रहे चापि रवेर्वाक्य प्रमाणतः ॥
तेजसा पूरिताङ्गाश्च लक्षणाढ्या मनोहराः ॥२१॥

शुभ योग और उत्तम ग्रहों में सूर्य के वचन प्रमाणानुसार महान् तेज से प्रकाशमान अङ्गवाली सत्लक्षण सम्पन्ना मनोहराङ्गी ॥२१॥

सर्वाः सुकण्ठ रत्नाश्च सुता जाताः शुभाननाः ॥
प्राप्त कालेतु ताः कन्याः महोत्सव विधानतः ॥२२

कण्ठों में सुन्दर रत्नों को पहनी हुई इसी प्रकार सुन्दर मुख वाली सब कन्यायें पैदा हुईं। समय आने पर महान उत्सव विधान पूर्वक उन सब कन्याओं का ॥२२॥

महतापि सुदायेन रामेराज्ञा सुयोजिताः ॥२३॥

महान सुन्दर दामाद श्रीरामजी के लिए राजा तीब्रौज ने विवाह कर दिया ॥२३॥

इति श्रीशङ्कर कृते अमररामायणे श्रीसीतारामरत्नमञ्जूषायां शिवाशिव सम्वादे
सूर्य्य कन्या विवाहो नामैकपञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५१॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां सूर्यकन्या विवाहोनामैक पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥५१॥

ताभ्यश्च दत्तवान्हारं खञ्जगाम दिवस्पतिः ॥
राजानम्प्रति ताभिश्च चरित्रञ्चि चमत्कृतम् ॥१७॥

उन सब स्त्रियों के लिए सुन्दर प्रकाशमान एक २ हार दे गये वे सब स्त्रियायें भी राजा के समक्ष आ करके उस चमत्कारमयी चरित्र को सब सुनाया ॥१७॥

कथित न्निश्छलत्वादुधि कालोत्तर सुख प्रदम् ॥
एकान्तेच समाहूय नृपेण च विवेकिना ॥१८॥

भविष्य में सुख देनेवाली निश्छलता पूर्वक कही हुई उन स्त्रियोंकी बातों को सुनकर बड़े विवेकी राजा ने एकान्त में ॥१८॥

त्रिकालज्ञे गुरौसर्वंयभ्दूत न्तन्निवेदितम् ॥
तदाभूतम्भविष्येननिमित्त कथनेन वै ॥१९॥

अपने त्रिकालज्ञ गुरू को बुलाकर यह जो कुछ हुआ था सारा समाचार गुरु जी के लिये निवेदन किया। भविष्य के निमित्त यह जो कुछ भी हुआ था इसको राजा के कहने पर ॥१९॥

गुरुणा बोधितो राजा श्रुत्वासोपि सुखम्ययौ ॥
पुन र्वर्षेव्यतीतेच राज्ञी सु लग्नकेशुभे ॥२०॥

गुरू जी ने राजा को समझाया। राजा भी सुन समझकर सुख को प्राप्त होगये। एक वर्ष बीतने पर उन सब रानियों से सुन्दर सुलग्न में ॥२०॥

शुभयोगेग्रहे चापि रवेर्वाक्य प्रमाणतः ॥
तेजसा पूरिताङ्गाश्च लक्षणाढ्या मनोहराः ॥२१॥

शुभ योग और उत्तम ग्रहों में सूर्य के वचन प्रमाणानुसार महान् तेज से प्रकाशमान अङ्गवाली सत्लक्षण सम्पन्ना मनोहराङ्गी ॥२१॥

सर्वाः सुकण्ठ रत्नाश्च सुता जाताः शुभाननाः ॥
प्राप्त कालेतु ताः कन्याः महोत्सव विधानतः ॥२२

कण्ठों में सुन्दर रत्नों को पहनी हुई इसी प्रकार सुन्दर मुख वाली सब कन्यायें पैदा हुईं। समय आने पर महान उत्सव विधान पूर्वक उन सब कन्याओं का ॥२२॥

महतापि सुदायेन रामेराज्ञा सुयोजिताः ॥२३॥

महान सुन्दर दामाद श्रीरामजी के लिए राजा तीब्रौज ने विवाह कर दिया ॥२३॥

इति श्रीशङ्कर कृते अमररामायणे श्रीसीतारामरत्नमञ्जूषायां शिवाशिव सम्वादे सूर्य्य कन्या विवाहो नामैकपञ्चाशत्तमः सर्गः ॥५१॥

इति श्री मधुकर रूप रसास्वादिना कृता टीकायां सूर्यकन्या विवाहोनामैक पञ्चाशत्तमः सर्गः समाप्तः ॥५१॥

अतः परन्तु देशोऽस्ति नाम्ना कोशालको बृहत् ॥
तत्र राजपुरी नाम्ना नन्दकाशालपञ्चका: ॥१॥

इससे आगे एक बहुत बड़ा कौशल नाम का देश है वहाँ उस देश में नन्दका नाम की नगरी पांच परकोटा वाली है ॥१॥

राजा तत्रास्ति देवोजा देवता तुल्य ओजसा ॥
सुवली नाम तस्यास्ति भ्राता राज्ञस्तु सन्मतः ॥२॥

उस नगरी के राजा श्री देवौजा जी देवताओं के समाम पराक्रमी हैं उन देवौजा के एक सुवली नामक भ्रात। राजा के अत्यन्त प्रिय हैं ॥२॥

त्रिशत ञ्चैवत्रिंशच्च भार्य्या राज्ञः शुभाननाः ॥
भ्रातुश्चापि त्रयस्त्रिंशत्तस्यराज्ञो वराननाः ॥३॥

उन महाराज देवौज जी के तीन सौ तीस स्त्रियायें सुन्दर मुखचन्द्र वाली हैं उनके भ्राता सुवली के भी तैंसीस सुन्दर मुखचन्द्रवती स्त्रियायें है ॥३॥

द्वयो श्चापि द्वौ द्वौ पुत्रौ ह्येकैकायाम्बभूवतुः ॥
विद्यावन्तौ च बलिनौ प्रजानांहिमुद प्रदौ ॥४॥

उन दोनों भाइयों के दो दो पुत्र एक २ स्त्री से उत्पन्न हुए जो बड़े विद्वान, बलवान, प्रजा को आनन्द देने वाले हुए ॥४॥

प्रजाश्चापि धर्म्मरताः सद्गुणैर्विभवैर्युताः ॥
राष्ट्रेऽपि कुशलन्तस्य धन धान्यैश्च सर्वदा । ५॥

सुन्दर धर्मात्मा ऐश्वर्य मान, प्रजा से अत्यन्त मान्य इस प्रकार उन महाराज के राज्य में धन धान्य से सर्वदा कुशल रहती थी ॥५॥

तस्य राज्ञश्चैकदाहिभार्य्या अत्यन्त शोभनाः ॥
क्रीडनार्थं शरद्रात्रौ मिलिताः च्चोममागताः ॥६॥

उन महाराज की अत्यन्त सुन्दरी पत्नियां एक समय शरदपूर्णिमा की रात्रि में सब मिल करके खेलने के लिए अपने महल के छत पर गयीं ॥६॥

ताभिरुच्चस्वरैर्गानं कृतं चित्तापकर्षकम् ॥
तद्गान हत चित्तोपि पूर्ण एव कलानिधिः । ७॥
आकाशादवतीर्य्याथ नारीणां मण्डलेस्वयम् ॥
सकामेनागतस्तत्र ताश्च तस्मिन्विमोहिताः ॥८॥

और ऊँचे स्वर से चित्ताकर्षक गान किया इस प्रकार उन स्त्रियों के गान को सुनकर सोलह कला सम्पन्न चन्द्रमा का चित्त हरण होगया। वह चन्द्रमा आकाश से उतर करके नारियों के मण्डल में स्वयं आया। सकामी उस चन्द्रमा ने उन स्त्रियों को विमोहित किया ॥७-८॥

शौन्दर्यातिशयेनासा मसावस्याति रूपतः ॥
इमा नार्य्यश्च सद्रूपाः प्रीति र्जाता परस्परम् ॥६॥

शौन्दर्य की अतिशयता से परस्पर मोहित हुए चन्द्रमा और वे सब स्त्रियां परस्पर स्नेह में भर गयी ॥६॥

तासु रेमे मृगाङ्कोपि रेमिरेचशुभाननाः ॥
तस्मिन्कलानिधावेवं तोषं लब्ध्वा परस्परम् ॥१०॥

मृगाङ्क चन्द्रमा उन सुन्दर चन्द्रमुखियों के साथ रमण करके परस्पर सन्तुष्ट हुए ॥१०॥

न ज्ञातं तच्चरित्रं हि केनापि देव मायया ॥
तद्योगजा ह्यमानुष्याः सुषमाति मनोहराः ॥११॥

देवमाया की वजह से यह चरित्र किसी ने भी नहीं जाना चन्द्रमा के योग्य सुन्दरी सुषमा से मनको हरने वाली अमनुष्या सदृश ही थी ॥११॥

तासु सर्वासु सञ्जाताः प्रत्येकं कन्यका दश–
शुभलग्ने शुभेयोगे सूतिका गृह द्योतका ॥१२॥

इस प्रकार उन सब स्त्रियों में प्रत्येक से दस २ कन्यायें शुभ लग्न शुभ योग में सूतिका घर को प्रकाशित करने वाली उत्पन्न हुई ॥१२॥

प्राप्ते वै चाष्टमे वर्षे तासा मुद्वाह चिन्तया ॥
युक्तो बभूव राजापि कुल रूपेण सादृशे ॥१३॥

इस प्रकार उन सब कन्याओं के आठ वर्ष पूरे होने पर राजा अपने कुल और रूप के सदृश उन कन्याओं के विवाह के लिए चिन्ता युक्त हुए ॥१३॥

गुरू राज्ञस्त्रिकालज्ञ स्तमाहूय पप्रच्छ स ॥
कथितन्तेन वै तासां जन्मतो भावितव्यकम् ॥१४॥

राजा ने अपने त्रिकालदर्शी गुरू जी को बुला करके पूछा तो गुरू जी ने भी उन सब कन्याओं के लिये जन्म से ही सब भविष्य कह सुनाया ॥१४॥

श्रुत्वा गुरु वचः सत्यं महाहर्षं समाप्तवान ॥
चकार सहसा कार्य्ये प्रवृतिं सचिवै स्तदा ॥१५॥

गुरू महाराज की सत्यवाणी को सुनकर राजा महाराजा हर्षित हो करके उन सब कन्याओं के विवाह के लिए सब मन्त्रियों से मिलकर सहसा कार्य आरम्भ कर दिए ॥१५॥

लग्न पत्रीत्वयोध्यायां प्रेषिता शुभकेदिने ॥
सचिवै श्चतुरैर्दूतै र्ब्राह्मणैः पण्डितैः समम् ॥१६॥

मासैकेनापि ते शीघ्रं सचिवावर्गाभिहयैः ॥
प्राप्ता श्रीराम नगरीं दृगुत्सव करीं शुभाम् ॥१७॥

लग्नपत्रिका लिखकर शुभ दिन में पण्डित ब्राह्मण चतुर मन्त्रियों को दूत बनाकर पत्रिका ले के श्रीअयोध्या जी में भेजे। वे सब दूत भी अपने शीघ्रगामी घोड़ों से एक महीनाके अन्दर नेत्रोत्सवस्वरूपा श्रीरामनगरी में पहुंच गये ॥१६-१७॥

पुनः प्रविश्य नगरं वशिष्टस्य शुभायने ॥
समागम्य वशिष्ठश्चतेन युक्ताश्च संस्कृताः ॥१८॥

नगर में प्रवेश करके श्रीवसिष्ठ जी के सुन्दर महल में गये। श्रीवसिष्ठ जी से समागम करके उनके सहित सत्कार पूर्वक ॥१८॥

राजराजस्य सदसि प्रसन्नानन शोभनाः ॥
आजग्मुर्नियतात्मानः सभां दृष्ट्वा सुविस्मिताः ॥१९॥

राजराजेश्वर महाराज दशरथजी की सभा में प्रसन्न मन होकर के आये। सावधान मन हुए वे सब महाराज की सभा को देखकर के चकित होगये ॥१९॥

निवेदिता वशिष्टेन कृतप्रणामा नराधिपे ॥
देशतो नामत श्चापि कार्य्यं ज्ञापनयापरम् ॥२०॥

महाराज को सब ने प्रणाम किया; उनके देश नाम कार्य का ज्ञापन श्रीवसिष्ठ जी ने महाराज को निवेदित किया ॥२०॥

सागरं सरितोन्यायान्नराणां धर्मशालिनाम् ॥
सम्पदोऽपि समायन्ति स्वत एवोत्तमा गृहम् ॥२१॥

श्रीवसिष्ठ जी बोले कि हे राजन धर्मशील पुरुषों के लिए सम्पत्ति दशो दिशाओं से अपने आप ऐसे चली आती है जैसे नदियाँ समुद्र में जाती हैं ॥२१॥

श्रीमद्दशरथउवाच—तवराज्यंगृहं ते च कर्तृत्वश्च त्वयि प्रभो ॥
क्रीयतामुत्तमं यद्धि दृश्यते चात्मनोमते ॥२२॥

श्री चक्रवर्ति दशरथ जी बोले कि हे प्रभो ! यह राज्य और घर सब आपका है जो भी उचित उत्तम कार्य आपको दीखता हो वह सब आप अपने मन के अनुसार कीजिये मैं आपका अनुचर हूँ ॥२२॥

वशिष्टउवाच—धर्मशीलोसि राजेन्द्र कथम्वै नोच्यते त्वया ॥
स्वत आगन्तु मोहन्ते भूतयोपिभवादृशे ॥२३॥

श्रीवसिष्ठजी बोले कि हे राजेन्द्र ! क्यों न आप ऐसा कहेंगे ? आप धर्मशील ऐसे आप सरीखे धर्मात्माओं के लिये ऐश्वर्य अपने आप मोहित होकर के स्वतः आता है ॥२३॥

शिवउवाच—इत्थं प्रशंस्य राजानं वशिष्टेन महात्मना ॥
स्थित्वाहि व्यजन स्थानं सुमन्त्रेण चमन्त्रिणा ॥२४॥

श्रीशिवजी बोले कि इस प्रकार महात्मा श्री वसिष्ठ जी ने महाराज की प्रशंसा की और मन्त्री सुमन्त्र जी के साथ एकान्त स्थान में बैठकर ॥२४॥

निर्णित्य ज्ञापितो राजा लिखित्वा प्रति पत्रिकाम् ॥
प्रेषिताः स्वादरेणैव दूता ये दूर देशिकाः ॥२५॥

निर्णय करके एक पत्र लिखा। दूर देशिक दूतों के हाथ देकर बड़े आदर से भेजा ॥२५॥

शीघ्रं गता स्वदेशन्ते सुमन्त्रोप्यत्र शीघ्रकम् ।
वशिष्टेन दर्शिते तु समये कार्यामावहत् ॥२६॥

वे दूत भी शीघ्र अपने देश को गये। इधर श्रीसुमन्त्र जी भी शीघ्र श्रीवशिष्ठ जी के कहने पर निश्चित समय में शीघ्र कार्य किया ॥२६॥

माङ्गल्यं च ध्वजारोप्यराजानश्च निमन्त्रिताः ॥
सर्वंहि सज्जना कारं प्रदीप्तं कृतवान्यथा ॥२७॥

एक माङ्गलिक कृत्यसहित ध्वजा को आरोपित किये। बहुत से माण्डलिक राजाओंको निमन्त्रित किया। बरात की यथार्थ सजावट सब किये जैसे कि ॥२७॥

रथेभाश्वागजा श्चैव विमानानि सहस्रशः ॥
तथैवसुखयानानि भिन्नाकाराणि कोटिशः ॥२८॥

हाथियों के रथ घोड़ों के रथ, हाथियों की सजावट उनके हौदाओं की सजावट इस प्रकार हजारों की संख्या में सजे। इसी प्रकार सुखयान आदि भी भिन्न २ आकार वाले करोड़ों की संख्या में सजे ॥२८॥

तत्स्थाना द्वहि रानीय मेलनम्व्यूह संहतौ ।
आमात्येन कृतं सर्वम्परिस्कृत्वा विभूषणैः ॥२९॥

उन सब सेना व सामानोंको निवास स्थान से बाहर लाकर सबका मिलान करके अलग२ खण्ड मिला करके व्यूहाकार बारात को उचित अङ्ग भूषणों से सजे ॥२९॥

कोटिशः सेवकानाम्वैभूषणानि समन्ततः ॥
तथाविधानि वस्त्राणि शस्त्राणि च शुभानिवै ॥३०॥

करोड़ों की संख्या में सेवकों के भूषण तथा उसी प्रकार वस्त्र, शस्त्र, सेवा सामग्री चारों तरफ से सजावट की ॥३०॥

वाहनानि तथा तेषांभूषितानि सुभास्वरैः
विशेष वरयोग्यानि विशेष शोभनान्यपि ॥३१॥

उसी प्रकार सवारियां उनके भूषण जो कि सुन्दर स्वरों से बोलने वाले बरात में वर के योग्य विशेष शोभा देने वाले सब सजाये गये ॥३१॥

दण्डाश्च काञ्चना रौप्या खचिता श्चापि स्वर्णकाः ॥
स्वर्ण पुष्पाञ्चिताश्चापि खेलका भ्रमणार्थकाः ॥३२॥

सादे स्वर्ण दण्ड, रत्न खचित स्वर्ण दण्ड चांदी के दण्ड इन सबकी भी सेवकों सहित खण्डों की सजावट हुई। इसी प्रकार स्वर्ण पुष्पोंसे रचित बगीचा तथा खेलनेके घोड़ादि खिलौने जो कि यन्त्रों से भ्रमण करने वाले इनका खण्ड सबकी रचना की ॥३२॥

दीपगृहादीपवृक्षा दीपदण्डाप्यसंख्यकाः ॥
आदर्शा कलसूत्राश्च क्रीडार्थाष्टापदादिकम् ॥३३॥

इन सब खण्डों को प्रकाशित करने के लिये बीच २ दीप-गृह तथा दीपवृक्ष और अगल-बगल में दीप दण्ड सुन्दर पंक्ति पूर्वक असंख्य रचना किये। दर्पणों की सजावट, सूत्रों से चलने वाले खिलौनाओं की सजावट तथा तख्तों में चौपड़ादि खेलने की सजावट अलग विभाग पूर्वक सजाए गये ॥३३॥

अन्ये पदार्थाराजार्हा वेषवार विधा अपि ॥
लेपनार्थाश्च सौगन्धाः पानार्थाभक्षणार्थकाः ॥३४॥

तथा राजाओं के योग्य अन्य भोजनादि पदार्थ नमकीन मसालेदार तथा मीठे सुगन्धित भक्ष्य भोज्यादि विधि से इनकी सजावट की गयी और अङ्गराग सुगन्धि आदि पदार्थ भी ॥३४॥

अंशुकाख्याभूषणाख्या छत्रादि चामरादिकम् ॥
मृगाश्च पक्षिणश्चैव क्रीडार्थासख्यं भूषिताः ॥३५॥

तथा इसी प्रकार वस्त्र भूषण छत्र चंवरादिक और मृग पक्षी खेलने योग्य भूषणों से भूषित असंख्य रचना किये ॥३५॥

तत्तद्गृहात्समाहृत्य सुमन्तेन स्वसाधकैः ॥
सुखायरामचन्द्रस्य स्वभावज्ञेन सर्वदा ॥३६॥

उन वस्तुओं के रहने का और सेवा का भी सुमन्त्र जी ने श्रीरामचन्द्रजी के स्वभाव को जान कर उनके सुख के लिये सब रचना की ॥३६॥

सुधार्य्य सकलं याने सम्भार्य्य सेवकेष्वपि ॥
प्रतीत्य प्रथमंमार्गे कृतम्पादाति संहतिः ॥३७॥

इन सब पदार्थों को सुन्दर यानों में सुधार करके इनके सेवकों के सहित सम्हाल भी किया। इस प्रकार सब सजावट करके बरात के आगे २ मार्ग संशोधनके लिए प्रथम विश्वस्त पदाति सेना को चलने का इन्तजाम किया ॥३७॥

वाह्यानि शकटैरेव बृहद्भाण्डानिवारिणः ॥
नोष्णतामातपैर्याति येष्वेव वारिशीतलम् ॥३८॥

मार्ग में बगीचा सिंचन पशु पक्षी आदि सबके प्यास निवृत्ति वास्ते बड़ी २ जल की टंकिया सटकियों में रक्खी हुई चलने के लिये सजाई गईं। इसी प्रकार धूप से उष्णता न प्राप्त हो इस लिए जल की शीतलता का भी इन्तजाम किया ॥३८॥

उशीरका गृहा सीता अन्ये चाप्यंशुकागृहाः ॥
स्वर्ण सूत्राश्रिता एव वस्त्र प्राकार संयुताः ॥३९॥

खसखस के महल अन्य शीत उपचारक वस्त्रों के महल तथा स्वर्ण सूत्र निर्मित वस्त्रों की बड़ी २ कनातें वस्त्र महल को घेरने के लिए सजायी गयीं ॥३९॥

चलद्गृहा मणीनाश्च वैद्रुमा मलयैः कृताः ॥
स्फाटिका वाटिकाश्चैव महातपनिवारिकाः ॥४०॥

बहुत से विद्रुम आदि मणियों के सचल महल तथा मलय चन्दन के सचल महल इसी प्रकार स्फटिक मणियों के महाताप निवारक बगीचायें यन्त्रों द्वारा चलने वाले सब सजाये गये ॥४०॥

ध्वजाश्च केतनाश्चैव विशाला दूर दर्शनाः ॥
पताका श्चैव ते सर्वे स्वर्णका बहुबर्णकाः ।४१।

निवास स्थान के सहित दूर से दीख पड़ने वाली बड़ी ध्वजायें तथा पताका निशान वे भी बहुत रङ्गों के रचित सजाये गये ॥४१॥

अपरेशिल्पिनः सर्वे काष्ठधात्वादि कारकाः ।
शुभाशुभसूचकाश्च शब्दं श्रुत्वा च पक्षिणाम् ॥४२॥

इन सबकी रक्षाके लिए काष्ठका काम करनेवाले शिल्पी तथा धातुओंका काम करनेवाले शिल्पी तथा और भी बहुत से कार्यकर्ता शिल्पियों को साथ चलने का इन्तजाम किया गया। इसी प्रकार पक्षी पशु आदिकों की बोली सुनकर शुभाशुभ बिचार करने वाले लाक्षणिक लोगों को भी चलने का इन्तजाम किया ॥४२॥

ज्योतिर्विदोघाण्टिकाश्च जागरूकास्तथा परे ॥
निम्नोच्च भूमिका मार्गे कुद्दालेन समङ्कराः ॥४३॥

इसी प्रकार ज्योतिषियों को तथा समयकी घडी का विचार करनेवालों को तथा और भी जागरुक लोगों को तथा मार्ग के ऊंच नीच को सम करने वाले कुदाल आदिक औजारों को लिए हुए सेवकों को चलने का इन्तजाम किया ॥४३॥

पन्थाज्ञाश्चापि वहुश स्तथा च महिमार्ज्जकाः ॥
वस्त्रगृह स्थापकाश्च शतघ्नीनाश्च दग्धकाः ॥४४।

और मार्ग दर्शक तथा पड़ाव पर भूमि मार्जक और वस्त्रों के महलों को स्थापित करने वाले इसी प्रकार तोप मशीन गन आदि दागने वाले सेवकों को साथ लिया ॥४४॥

क्षेपका श्चाग्नि वाणानां स्फुलिंग चित्ररोपकाः ॥
विदूषका नटाश्चैव नर्त क्योपि ह्यसंख्यकाः ॥४५॥

और अग्निवाण के प्रहार करने वाले आतशवाजी आदि तथा चित्रों को रोपने वाले इसी प्रकार विदूषक नट नटियों (नर्तकियों) का भी असंख्य संख्या में साथ चलने का इन्तजाम किया ॥४५॥

विमाने नर्तका श्चैव हयोपरि च नर्तकाः ॥
गजोपरि नर्तकाश्च उड्डीन नर्त्तका अपि ॥४६॥

विमानों में नृत्य करने वाले घोड़ाओं पर नृत्य करने हाथियों पर नृत्य करने वाले पक्षियोंकी तरह आकाश में नृत्य करने वाले भी सजाये गये ॥४६॥

पक्षिणां शब्द कुर्वाणाः पशूनां शब्द कारकाः ॥
सदृशंशब्द कर्तारो बहुरूप प्रदर्शकाः ॥४७॥

पक्षियों के सदृश शब्द करने वाले तथा पशुओं के सदृश शब्द करने वाले और एक दूसरे के सदृश शब्द करने वाले तथा बहुरूपिया लोगों के भी चलने का साज सजे ॥४७॥

पशुयुद्ध करा श्चैव पशुयुद्ध विधायकाः ॥
मल्ला इभ कर्षकाश्च विपुलं लंघका अपि ॥४८॥

पशुओं का युद्ध कराने वाले पशुओं की तरह युद्ध करने वाले मल्ल युद्ध वाले हाथी को खींचने वाले बहुत चौड़े स्थान को लांघने वाले ॥४८॥

बहु वारं वारिविश्य तिष्ठन्त्यपि च तेजनाः ।
प्रधावन्तश्च ये वृक्षमारुह्यन्ति तथा विधाः ॥४९॥

इसी प्रकार बहुत देर तक जल में पैठने वाले इसी प्रकार एक आसन से बैठने वाले और बहुत दौड़ने वाले तथा दौड़ते हुए वृक्ष पर चढ़ने वाले ॥४९॥

उत्क्षिप्य कङ्कणं हस्ते धारयन्ति तथापरे ॥
अंगुल्यग्रे बहुभारंधारयन्ति तथा विधाः ॥५०॥

इसी प्रकार हाथ के कंगन को फेंक कर पुनः हाथ में धारण करने वाले इसी प्रकार उङ्गली के अग्रभाग से बहुत भार उठाने वाले ॥५०॥

नाशाग्रं कम्पयन्तश्च श्रवणश्च तथाविधम् ॥
बालभारम्पुच्छमिव चालयन्ति तथापरे ॥५१॥

नासिका अग्रभाग को कपाने वाले तथा कान हिलाने वाले और बालों के भार को पूंछ की तरह से हिलाने वाले ॥५१॥

कण्ठेन वाद्य नादश्च कुर्वन्ति च तथा विधाः ॥
इन्द्रजालविदाश्चैव महाश्चर्य्य विधायकाः ॥५२॥

कण्ठ से ही बाजाओं की आवाज निकालने वाले जादू और खेल जानने वाले आश्चर्यजनक काम करने वाले ॥५२॥

धावदश्वं समारुह्य धाव दश्वोपरिस्थिताः ॥
आनम्य भूमिगं वस्तु गृह्णन्ति च तथापरे ॥५३॥

दौड़ते हुए घोड़े पर चढ़ जाने वाले और घोड़ा को दौड़ाने वाले दौड़ते हुए घोड़े पर खड़े रहने वाले दौड़ते हुए घोड़ा पर से जमीन की वस्तु उठा लेने वाले ॥५३॥

जङ्घयोः पाद तलयोः कक्षयो र्वक्षणद्वये ॥
नालकेरि फलान्यष्टौ त्रोटयन्त्येक बारकम् ॥५४॥

तथा इसी प्रकार जंघाओं पर तथा पांव तले और अगल बगल कुक्षियों में नारियल के आठ फलों को एक बार में तोड़ने वाले ॥५४॥

एवम्भूत्या कौतुकिनो जनाः कौतुक हेतवे ॥
समानीताः सुमन्तेन श्रीराम बरजानके ॥५५॥

इस प्रकार के कौतुकी जनों को श्री राम जी की बरात में कौतुक करने के लिए सुमन्त्र जी ने सजवाया ॥५५॥

चलाचल वस्तु मयं गुणिनो हास्य कौतुकाः ॥
भूभुजाम्वैभवञ्चैषतद्द्वारे च श्रियं लभेत् ॥५६॥

हास्य करने वाले गुणी लोग कौतुक के लिये चल अचल वस्तुमय वैभव को साथ लेकर चल रहे हैं उन्हीं वस्तुओं द्वारा राजाओं के सदृश श्री वैभव] को प्राप्त करेंगे ॥५६॥

अतः परं सुमन्तेन ह्युपयानानि सुव्रते ॥
व्यूहेनैव रचनया कृतो विन्यास शोभनः ॥५७॥

इसके अलावा श्री सुमन्त्र जी ने उपयानों को भी व्यूहाकार रचना करके सुन्दर विन्यास बनाया ॥५७॥

तत्रोत्तर क्रमेणैव द्रष्टव्या शुभ वाहनैः ॥
विन्यासानां सुरचना महारस्मिभिरावृता ॥५८॥

इसके आगे एक से एक ऊँचाई क्रमसे सुन्दर वाहनों का महान् प्रकाश मण्डलसे घिरा विन्यास रचना किया ॥५८॥

प्रथमं सुखयानानि राजार्हाणि लसन्ति च ॥
पराध्यं रत्न चित्राणि नील वर्णानि पश्यताम् ॥५९॥

प्रथम राजाओं के योज्य सुखयान शोभित हैं जो विसकोमतीय रत्नों से देखने वालों के लिए नीलादि रङ्गों से शोभित है ॥५९॥

पताकाभिश्च कलशैः किङ्किणीनाञ्च झंकृतैः ॥
चलभ्दिस्तु जनैर्वाह्यैस्तानि शोभाम्प्रलेभिरे ॥६०॥

जिनमें पताका कलश किङ्किणी का झनकार मचा है इस प्रकार मनुष्योंके द्वारा ढोये जाते हुए सुन्दर शोभित हो रहे हैं ॥६०॥

शतैकं संख्यया तानि स्वर्णदण्ड करेधृतैः ॥
परिवारितानि भृत्यैरेष विन्यास आदितः ॥६१॥

जिनके अगल बगल एक सौ सेवक स्वर्ण दण्ड हाथों में लिये हुए घेरे हैं यह प्रथम विन्यस आरम्भ हुआ ॥६१॥

पीतवर्णानि यानानि तेषामग्रे लसन्तिच ॥
छायांसुक युतान्येवं गुम्फकुम्भाश्रितानि च ॥६२॥

इस विन्यास के आगे का मार्ग पीत वरण के यानों से शोभित हैं;जिनमें वस्त्रों की छाया जल कुम्भों से गुम्फित है ॥६२॥